❀ श्रीमते रामानुजाय नमः ❀

श्रीरामानुजाब्द ९७९

फरवरी १९९६

अनन्त सन्देश

वर्ष—२४

धार्मिक-प्रकाशन

अङ्क—९

श्रीवेंकटेश देवस्थान ८०/८४ फणसवाड़ी, बम्बई—२

विषयानुक्रमणिका

सम्पादक मण्डल

वार्षिक मूल्य		साधारण प्रति
भारत में ३०)रु०	कर्म हमारा जीवन है।	भारत में
आजीवन ३०१)रु०	धर्म हमारा प्राण है॥	६)०० रु०

।। श्रीमते रामानुजाय नमः ।।

अनन्ताचार्यवर्याणामनन्ताऽद्भुतभावदः। जीयादनन्तसन्देशः सदनन्तप्रभावतः ।।

ईशानां जगतोऽस्य वेङ्कटपतेर्विष्णोः परां प्रेयसीं, तद्वक्षःस्थलनित्यवासरसिकां तत्क्षान्तिसम्वर्धिनीम्।
पद्मालंकृतपाणिपल्लवयुगां पद्मासनस्थां श्रियं, वात्सल्यादिगुणोज्ज्वलां भगवतीं वन्दे जगन्मातरम् ।।

वर्ष २४ सम्वत् २०५२ फाल्गुन | श्रीधाम वृन्दावन | फरवरी १९९६ अङ्क-६

भगवत् प्रार्थना

श्रीरङ्गनाथ पुरुषोत्तम वासुदेव
श्रीराम माधव जनार्दन चक्रपाणे ! ।
कन्दर्पदर्पहर सुन्दर दिव्यमूर्ते
मामुद्धरस्व कृपया भगवन् मुरारे ! ।।१।।

गोपाल कृष्ण गरुडध्वज रङ्गनाथ !
लक्ष्मीश केशव हरे नृहरे मुरारे ।
वेदान्तवेद्य निजवैभव भक्तभोग्य
ऋद्धिं कुरुष्व सततं मम दीनबन्धो ।।२।।

श्रीरङ्गनाथ! जगतामधिनाथ! विष्णो!
गोदागृहीतकरपद्म मनोज्ञ मूर्ते ।
श्रीभूमिनायक कृपालय दीनबन्धो
प्रातर्नमामि चरणौ तव देवदेव ।।३।।

श्रीरङ्गनाथ मम नाथ नतार्तिहारिन्
वात्सल्यपूर्ण ! सुखवन्दितपादपद्म ।
वैकुण्ठनाथ ! निजसेवक कल्पवृक्ष !
मां त्राहि माधव ! महार्णवमग्नमेनम् ।।४।।

सम्पादकीय

श्रीसम्प्रदाय ही सत्सम्प्रदाय है

卐

श्रीवैष्णव जन जिस मार्ग का अनुसरण करते चले आ रहे हैं उसका नाम 'श्रीवैष्णव सम्प्रदाय' है। गुरु अपने शिष्य को जिस रहस्य का उपदेश अच्छी प्रकार से प्रदान करता है वही सम्प्रदाय है। भगवान् नारायण ने अपनी शिष्या प्रियतमा लक्ष्मी जी को उस सर्वोत्कृष्ट अष्टाक्षर महामन्त्र का उपदेश दिया। लक्ष्मीजी ने श्रीविष्वक्सेनजी को उसी रहस्य का उपदेश दिया। उन्होंने अपने दिव्य श्रीशठकोपमुनि को दिया, इस प्रकार यह श्रीगुरु परम्परा से प्राप्त रहस्य का उपदेश श्रीवैष्णवजन प्राप्त करते आ रहे हैं। इसलिए इस सम्प्रदाय को 'श्रीवैष्णव सम्प्रदाय' कहते हैं।

इस सम्प्रदाय में आराध्य=आराधना करने योग्य अथवा उपासना करने योग्य देवाधिदेव श्रीविष्णु भगवान् ही हैं। श्रीवैष्णव जन श्रीवैष्णवपद की अर्थात् वैकुण्ठ की प्राप्ति को ही मोक्ष कहते हैं। इस सम्प्रदाय की दीक्षा का सम्बन्ध श्रीविष्णु से हैं, अन्य से नहीं। उस दीक्षा में पंच संस्कार होते हैं—'ताप: पुण्ड्रस्तथा नाम मन्त्रो यागश्च पञ्चमः। अमी हि पंच संस्काराः परमैकान्त हेतवः।। ये ही पंच संस्कार हैं। श्रीविष्णु भगवान् से सम्बन्ध जीव का जोड़ते हैं, जीव उनका हो जाता है, इन संस्कारों को अपने गुरु से प्राप्त करके वैष्णव हो जाता है। तप्त शंख चक्र अपनी भुजाओं के मूल में धारण करता है। उस जीव का नाम विष्णु भगवान् के नाम पर रख दिया जाता है जैसे केशव, माधव, गोविन्द, नारायण आदि नारियों का नाम लक्ष्मी, पद्मा, गोदा, स्मृति, मेधा. धृति, क्षमा आदि, उसे ऊर्ध्वपुण्ड्र तिलक अर्थात् भगवान् के चरण, दोनों चरणों के बीच में लक्ष्मी जी श्री के रूप में विराजती है यह धारण कराया जाता है मस्तक की सार्थकता ऊर्ध्वपुण्ड्र धारण करने से ही है। उस जीव का मस्तक ठण्ठा रहता है वह अच्छी-अच्छी सात्विक बातें सोचने समझने के लिए प्रेरित होता है। यह व्यक्ति श्रीविष्णु को मानने, आराधना करने वाला है यह दूर से ही मालूम हो जाता है। अन्य वैष्णव उसे देखते ही, यह व्यक्ति अपना है प्रिय है भाई है, यह मानकर उसे प्रणाम करता है साष्टाङ्ग करता है।

वैष्णवः वैष्णवं दृष्टवा दण्डवत् प्रणमेत् भुवि'दण्डवत् भूमि में गिरकर प्रणाम करता है। उस वैष्णव के पंच संस्कारित शरीर को देखकर उसके प्रति अपना कुटुम्बी का सा व्यवहार करता है, केवल इतना ही नहीं वह यह भी जानता है इसके हृदय कमल कर भगवान् चतुर्भुज विष्णु अपने हाथ में शंख, चक्र, गदा, पद्म लेकर विराज रहे हैं, उनको साष्टांग प्रणाम करता है। जब इतनी ऊँची अवस्था में पहुँचकर एक वैष्णव सामने समुपस्थित श्रीवैष्णव का आदर करता है तो फिर राग दम्भ द्वेष पाखण्ड घृणा आदि हीन भावों को स्थान ही कहाँ मिल सकता है। यह ऐसा सात्विक वर्ग है कि स्वयं तो तरही गया दूसरोंको भी तार देता है। यह विष्णुभगवानको ही निर्हेतुक कृपाफल है कि वह अपने जनों के समुदाय को इतना पवित्र, आदर्श, वरेण्य बना देती है। इस सम्प्रदाय का उद्देश्य है कि संसार बन्धन से मुक्त होकर वैष्णवपद, परम पद 'यद् गत्वा न निवर्तन्ते तद् धाम परमं मम।' जहाँ जाकर जीव फिर लौटता नहीं, जन्म लेना और मरना के चक्कर में पड़ता नहीं है। यह परमपद प्राप्त करने के लिए वैष्णव जन श्रीविष्णु की उपासना, आराधना भक्ति करते हैं। भगवान् विष्णु की कृपा से ही उन्हें प्राप्त करते हैं।

इस श्रीवैष्णव सम्प्रदाय को सत्सम्प्रदाय, श्रीसम्प्रदाय, भागवत सम्प्रदाय, नारायणी सम्प्रदाय

रामानुज सम्प्रदाय इन नामों से भी पुकारा जाता है। सत्सम्प्रदाय=इसे इसलिए कहा जाता है कि सत् अर्थात् भगवान् विष्णु से सम्बन्धित उपदेश ही इस सम्प्रदाय में दिये जाते हैं अत: सदुपदेशों पर अवलम्बित होने से इसे सत्सम्प्रदाय कहा जाता है। जो सदुपदेश प्रदान करते हैं उन्हें 'सदाचार्य' कहा जाता है। श्रीजी की इस सम्प्रदाय पर विशेष कृपा होने से 'श्रीसम्प्रदाय' इसका नाम पड़ा। श्रीजी ने अपने आश्रित जीवों के उद्धार के लिए भगवान् नारायण से विशेष पुरस्कार किया, सिफारिस की है! जगत्बन्धो, कृपालो! आप इन जीवों पर निर्हेतुक कृपा करिये, तभी इनका उद्धार सम्भव है। अन्यथा ये संसार बन्धन में ही पड़े रहेंगे भगवान् ने कहा–हे देवि! इन जीवों के कर्मों को देख नहीं रही हो ये अहर्निश पापों को अपराधों को करते हैं आप इनका उद्धार करने को कहती हैं। तब श्रीजी ने कहा प्रभो! पाप कौन नहीं करते हैं। ब्रह्मा से लेकर चींटी तक सब पाप=अपराध परायण हैं, आप अपनी निर्हेतुक कृपा करके इनका उद्धार कीजिये। भगवान् को बाध्य होकर उन जीवों का उद्धार करना पड़ा।

अतः श्रीजी हमारी माता हैं,भगवान् को हमारे लिए मनाने वाली, अनुकूल करने वाली हैं। श्रीजी की हम वैष्णवों पर अत्यन्त दया दृष्टि है अत: इस सम्प्रदाय को 'श्रीसम्प्रदाय' कहते हैं। इसे भागवत सम्प्रदाय इसलिए कहा जाता है कि यह सम्प्रदाय भगवान् से, नारायण से, सत्ववान् विष्णु से सम्बन्धित होने से यह भागवत, नारायणी, वैष्णवी सम्प्रदाय कही जाती है, श्रीरामानुजीय सम्प्रदाय इसलिए कहलाती है कि श्रीरामानुजाचार्य स्वामी जी महाराज ने इस सम्प्रदाय के प्रचार-प्रसार में बड़ा परिश्रम किया, अत: उनके नाम पर यह रामानुजीय सम्प्रयाय कहलाया।

इस सम्प्रयाय के प्रवर्तक साक्षात् जगत्पति श्री विष्णु भगवान् होने से यह परम सात्विक सम्प्रदाय है किसी मनुष्य के द्वारा प्रचलित न होने से इसकी विशेष मान्यता है। इस वैष्णव सम्प्रदाय का तिरोभाव होने पर स्वयं श्रीविष्णु ही इसके उपदेश परम्परा की पुनः प्रतिष्ठा करते हैं। भगवान् विष्णु अपनी अभिन्न महिषी श्रीजी के लिए उपदेश करते हैं श्रीजी अपने समीप रहने वाले नित्यमुक्तों जैसे श्रीविष्वसेनजी जो भगवान् विष्णु के सेनापति जिनके वेंत के अग्रभाग के जरा सा हिलने मात्र से सम्पूर्ण विश्व की व्यवस्था व्यवस्थित चलती रहती है उनको उस रहस्य का उपदेश देती हैं, जिस उपदेश को प्राप्तकर श्रीविष्वक्सेनजी उस रहस्यार्थ का प्रचार करने आगे बढ़ते हैं।

यह श्रीसम्प्रदाय वेद वेदान्त पर आधारित है, वेद के सम्पूर्ण भाग को लेकर समन्वय परकदृष्टि रखते हुए, कहीं किसी प्रकार का वैमत्य नहीं रखते हुए वेदार्थ का सम्यक् प्रचार-प्रसार करता है। यही कारण है कि इसके प्रचारक आचार्य गुरुजन वेदमार्ग-प्रतिष्ठापनाचार्य कहलाते हैं। यह श्रीसम्प्रदाय प्रस्थानत्रयी (अर्थात् वेदान्त सूत्र, उपनिषद्, और गीताभाष्य) के जितने अंश को वेदान्त ने अमान्य ठहराया उतनें अंश को न स्वीकार करते हुए भी उस अंश की सही मीमांसा करके समन्वयात्मक दृष्टि से शेष अंश के साथ उसे जोड़ा गया, इसके लिए आधार चुना गया–पाञ्चरात्र–आगम जिसका उपदेश स्वयं भगवान् ने दिया है, उसीको आधार बनाकर इस श्रीसम्प्रदाय को परमवैदिक सत्सम्प्रदाय सिद्ध किया है। यह सम्प्रदाय बताता है कि जो जीव को अनादि रूप से प्राप्त होने से भोगों के प्रति आसक्ति और उनका भोगों में अभिनिवेश हो गया है, उनके प्रति निवृत्ति करना ही इस श्रीसम्प्रदाय का मुख्य उद्देश्य है। इसका यह भी उद्देश्य है कि परमश्रेय भगवत्सन्निधि तथा उनकी सेवा सतत रूप से प्राप्त हो जाय। ऐसा होने पर संसार से मोक्ष प्राप्त हो जाता है। जीव मात्र का चरम लक्ष्य भी यही है। इसके लिए प्राणी को जीवन रहने तक परमशुद्ध रहना, शुद्ध भगवत्प्रसाद ग्रहण, विचार,आचरण करना आवश्यक है।

कौशल्यानन्दनभगवतः श्रीरामचन्द्रस्य सुप्रभातम्

रचयिता–महन्त स्वामी श्रीराघवाचार्य जी महाराज
भीतिहरा पत्रालय कुकुढ़ा, जिला बक्सर (बिहार)

हे राम राम रघुनन्दन राघवेश ! श्रीकोशलेशसुत बालक ! रामचन्द्र ! ।
अर्चावतार करुणामय भव्यमूर्त्ते निद्रां त्यजस्व भगवँस्तव सुप्रभातम् ॥१॥

अस्ताचलञ्च गतवानधुना तमीशः प्राच्यां दिवाकर उदेति जगन्निवास ।
रात्रिर्गता नहि निशा घटिका वदन्ति निद्रां त्यजस्व भगवँस्तव सुप्रभातम् ॥२॥

गम्भीरभारग्रहणाज्जनरक्षणस्य श्रान्तोऽसि सालस विभो शयितोऽसि तेन ।
त्वां बोधयामि शयनाज्जनरक्षणाय निद्रां त्यजस्व भगवँस्तव सुप्रभातम् ॥३॥

श्रीकोशलेशरमणी रमणीयस्थाल्यां कर्पूरदीपितकरा तव ह्यारतीञ्च ।
कर्तुं च वाञ्छति मुदा तव दक्षगासा दृष्ट्या विलोकय विभो तव सुप्रभातम् ॥४॥

स्वीयाङ्गना सहित सम्प्रति दर्शनाय ब्रह्मादयः सुरगणाः समुपस्थितास्ते ।
स्तुन्वन्ति त्वां स्तववरैस्तव तोषहेतोर्निद्रां त्यजस्व भगवँस्तव सुप्रभातम् ॥५॥

लक्ष्मीसमुद्रतनयाऽपि च वाञ्छते तत् त्वद्दर्शनं द्रुततरं सुरवत्प्रभाते ।
संकोचशीलवशतो नहि कथ्यते तन्निद्रां त्यजस्व भगवँस्तव सुप्रभातम् ॥६॥

सूर्योऽपि पूर्वदिशि तत्तव सम्मुखस्थस्त्वद् दर्शनाय त्वरितं तव बालरूपम् ।
ध्यायन् बिलम्बभयतः स च चिन्तितो हि निद्रां त्यजस्व भगवँस्तव सुप्रभातम् ॥७॥

यो ह्यर्चकः प्रतिदिनस्य च सोऽपि चाद्य स्नात्वा ललाटपटले तिलकं विधाय ।
बद्ध्वा करौ विनयते तव बोधहेतोर्निद्रां त्यजस्व भगवँस्तव सुप्रभातम् ॥८॥

नायं सुस्वापसमयः शरणङ्गतानां संरक्षणस्य समयः पठनस्य वाऽपि ।
पूर्वाह्ण कृत्य करणाय यथावकाशं त्वां बोधयामि भगवँस्तव सुप्रभातम् ॥९॥

सुप्ते त्वयि स्वपिति बिश्वमनन्तमेतद् बोधङ्गते त्वयि विभो ! तदपि प्रबुध्येत् ।
सुप्तेश्च जागृतिवरं जगतां हिताय निद्रां त्यजस्व भगवँस्तव सुप्रभातम् ॥१०॥

प्रेषक–रामलक्ष्मण चतुर्वेदी पुजारी

श्रेष्ठ आत्मायें

श्री १००८ श्रीमद्वेदमार्गप्रतिष्ठापनाचार्योभयवेदान्तप्रवर्तकाचार्य श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य सत्सम्प्रदायाचार्य श्रोत्रियब्रह्मनिष्ठ जगद्गुरु भगवदनन्तपादीय

—श्रीमद्विष्वक्सेनाचार्य श्रीत्रिदण्डी स्वामी जी महाराज, बिहार

नमोस्तु ते व्यासविशालबुद्धे, फुल्लारविंदायतपत्रनेत्र ।
येन त्वया भारततैलपूर्णः, प्रज्ज्वालितो ज्ञानमयः प्रदीपः ।।

उल्लेख करते हुये बताया कि कृष्ण द्वैपायन जी अपनी विशाल बुद्धि के कारण वेदव्यास जी के उपनाम से सुशोभित हुये। जिस प्रकार वृत्त के क्षेत्रफल को जानने के लिये व्यास रेखा की आवश्यकता पड़ती है उसी प्रकार वृत्त रूपी वेद के वास्तविक तत्व को जानने के लिये श्रीवादरायण जी, व्यास रेखा के तुल्य हैं। इन्होंने अपनी विशाल बुद्धि के बल से एक ओर स्त्री शूद्र-चाण्डाल स्वपच आदि को वेदज्ञान में प्रवेश पाने के लिये चार लाख श्लोक वाले पुराणों का निर्माण किया और दूसरी ओर भारतीय संस्कृति की मर्यादा को अक्षुण्ण रखने के लिये महाभारत का निर्माण किया, जिसमें सती साबित्री ऐसी पूज्या नारी, उपमन्यु ऐसे शिष्य विदुला ऐसी माता, कौरव और पाण्डव ऐसे वीरों की कथायें वर्णित हैं। इसमें भारत की पितृ मातृ एवं गुरु-भक्ति, पातिव्रत-धर्म, राजनीति आदि के सुन्दर उपदेशमय आख्यानों की भरमार है। यदि व्यास जी पुराणों का निर्माण न किये होते तो वेद वाक्यों में जो भ्रम है "शिव एव केवलम्" "आत्मा एव इदं अग्रे आसीत्" आदि, वह कदापि दूर नहीं होता आपने बताया कि शिव, आत्मा अग्नि, आदि सभी शब्द उस परमात्मा के ही नाम हैं। ब्रह्म सूत्र की रचना कर व्यास जी ने मानव समुदाय को प्रकाश की ओर ले जाने का प्रयत्न किया है।

जिस प्रकार कभी वासी न होने वाला कमल का फूल सभी देवों के लिये समान है, कहने का आशय यह कि व्यास जी अपने ग्रन्थों में किसी के लिये पक्षपात का स्थान नहीं रक्खे हैं। जो जैसा है उसका वास्तविक चित्रण इन्होंने बड़े मार्मिक ढंग से किया है। इसी प्रसंग में पूज्य स्वामी जी ने इस बात का – कि ब्राह्मणों ने ही भारत को नष्ट कर दिया है खण्डन करते हुये कहा कि यदि ब्राह्मण इस पृथ्वी पर न होते तो भारत की संस्कृति और मर्यादा रसातल में मिल गई होती। सम्पूर्ण विश्व अपनी प्रशंसा करता है, अपने अवगुणों को छिपाता है। किन्तु सत्यमार्गावलंबी ब्राह्मण वाल्मीक जी ही अपने दुर्गुणों को बताते हुये धनी, मानी, विद्वान योद्धा ब्राह्मण रावण को राक्षस कहने में हिचकते नहीं। यदि उनमें पक्षपात की भावना होती वे सवरी, निषाद श्वपच गीध और बन्दरों को महानीच बताते लेकिन उन्होंने ऐसा नहीं किया। दूध को दूध, पानी को पानी बताया। राजसूय यज्ञ पूर्ण हो रहा था किन्तु एक श्वपच के भोजन न करने से घंटा ही नहीं बजा। ब्राह्मण द्वारा लिखित इतिहास पुराणों में कहीं अन्याय नहीं है केवल हम लोगों के मस्तिष्क में है। जाने दीजिये; अतीत की बात, वर्तमान का उदाहरण ले लीजिये पं० मदनमोहन मालवीय ने गली गली में भीख मांगकर विश्व प्रसिद्ध हिन्दू विश्वविद्यालय का निर्माण कर कौन सा अन्याय किया। क्या इन्होंने इस कार्य से भारत

को नष्ट कर दिया ? आज लोग एक छोटा सा कुआं खोदते हैं उस पर अपने बाप दादा का नाम खोद डालते हैं। किन्तु उन्होंने इस विश्वविद्यालय को अपने नाम से नहीं बनवाया। प्राचीन संस्कृत को अक्षुण्ण रखने के लिये हिन्दू शब्द रक्खा। जिस समय विदेशियों ने भारत के ग्रन्थों को जला डाला, उस समय ब्राह्मणों ने ही श्लोकों को कण्ठ कर भारतीय संस्कृत की लज्जा बचाई। इन सब उदाहरणों को देखते हुये यदि ब्राह्मण निन्दक रूपी उल्लुओं को सत्य का प्रकाश न दिखाई दे तो उसमें ब्राह्मण रूपी सूर्य का क्या दोष है ? इन सब तथ्यों को देखते हुये भी जो लोग सत्य मार्ग के पाठ को पढ़ाने वाले ब्राह्मणों की निन्दा करते हैं उन्हें चुल्लू भर पानी में डूब मरना चाहिये।

इसके बाद आपने भारत की प्रशंसा करते हुए बताया कि जो लोग पाश्चात्य सभ्यता से प्रभावित होकर यह कहते हैं कि भारत को धर्म ज्ञान की तिलाञ्जलि देकर रोटी की समस्या को हल करनी चाहिये वे—'अन्धेनैव नीयमाना यथान्धा'' को चरितार्थ करते हुए सुर दुर्लभ मनुष्य तन से खेलवाड़ करने का उपदेश देते हैं। ज्ञान-प्रकाश में रत रहने वाला भारत ने कभी भी आहार-निद्रा मैथुन को प्राथमिकता नहीं दी है। भूखा रहकर महीनों उपवास रहकर कन्द मूल फल पर जीवन निर्वाह कर सर्वदा आध्यात्मिक और ज्ञान तृषा को दूर करने का प्रयत्न किया है। भारत के कण कण में जो आध्यात्मिक विद्या की सुगन्ध है वह विश्व के किसी भी कोने के लिए स्वप्न मात्र ही है। ऐसे ही भारत में श्रीवेद व्यास जी ने प्रचुर ज्ञानमयी गीता रूपी दीपक को जला कर यह बताया कि जिस प्रकार दीपक के प्रज्वलित होने पर सम्पूर्ण अन्धकार अपने आप नष्ट हो जाता है उसी प्रकार ज्ञानमणि गीता रूपी दीपक से हृदय के काम क्रोध मोह रूपी अन्धकार नष्ट होकर अध्यात्मिक ज्ञान रूपी प्रकाश की प्राप्ति होती है। जिससे जन्म-मरण का बन्धन शीघ्र ही नष्ट हो जाती है। जिस प्रकार ऋषियों ने विशाल बुद्धि वाले ज्ञान प्रदान करने वाले व्यास जी को नमस्कार किया है उसी प्रकार प्रत्येक मनुष्य को चाहिये कि वह ज्ञानवृद्ध और वयोवृद्ध को "नमउक्ति विधेम" श्रुति के द्वारा ही नमस्कार कर आयु-पशु-बुद्धि को त्यागकर स्वस्वरूप, परस्वरूप, पुरुषार्थस्वरूप, उपायस्वरूप और विरोधि स्वरूप को जानने का प्रयत्न करें। जिसने व्यक्ति को शीघ्रातिशीघ्र लौकिक और पारलौकिक सुख मिले।

इसके बाद गीता के छठें अध्याय के निम्नलिखित श्लोक की व्याख्या करते हुए आपने बताया कि सबसे—

सुहृन्मित्रार्युदासीनमध्यस्थद्वेष्यबंधुषु ।
साधुष्वपि च पापेषु समबुद्धिर्विशिष्यते ॥९॥

श्रेष्ठ महात्मा वही है जो सुहृद् मित्र, अरि, उदासीन, मध्यस्थ द्वेष्य, बन्धु साधु और पापियों में समान बुद्धि रखता है। अब प्रश्न यह है कि सुहृत और मित्र किसे कहते है। क्योंकि पाणिनी ने दोनों को एकह्। बताया है कि आपने इसका निराकरण करते हुये बताया कि जो स्वार्थ न चाहता हुआ दूसरे का हित कल्याण चाहता है उसे सुहृत कहते हैं। जैसे श्रीकृष्ण, सुदामा के सुहृद थे। प्रत्युपकार चाहने वाले को मित्र कहते हैं। जैसे राम सुग्रीव। राम ने सुग्रीव की स्त्री और राज्य को इसलिए दिलवाया कि उनकी भी स्त्री सीता का पता सुग्रीव द्वारा लग सके। ऐसे मित्र चार प्रकार के होते हैं। (१) औरस—जैसे पुत्र पौत्र आदि, (२) कृत सम्बन्ध—जैसे—विवाह आदि के सम्बन्धी। (३) वंशक्रमागत जैसे—राम और श्याम मित्र हैं। उनके पुत्रों में भी यदि मैत्री रहती है तो इसे वंशक्रमागत कहेंगे। (४) महती विपत्ती के समय रक्षा करने वाला।

शरणागति और प्रपत्ति में तारतम्य

लें०—वैं० वा० श्रीरंगनारायणदास जी, बदायूँ

श्रीरामानुज स्वामी जी ने विचार किया कि इस श्रीभाष्य वेदान्त ग्रन्थ को पढ़कर परम-सात्विक लोग कही ऐसा न समझें कि इसमें कहे हुए, बतलाये हुए मोक्ष के साधन को मुक्ति का उपाय है, यह समझ बैठें। तो बड़ा अनुचित होगा। मन में यह विचार कर आचार्य रुचि परिगृहीत साधन तो प्रपत्ति ही हैं। इसलिये प्रपत्ति का, शरणागति का वर्णन अलग गद्यके रूप में करते हैं। शरणागति गद्य उसका नाम है। पूछने वाले पूछ सकते हैं कि श्रीरामानुज स्वामी जी ने प्रपत्ति प्रतिपादनपूर्वक ही क्यों न मतान्तरों का खण्डन श्रीभाष्य में कर दिया, जिससे अलग ग्रन्थ बनाने की आवश्यकता भी न पड़ती और आचार्यरुचि परिगृहीत साधन भी पुष्ट होता। बात यह है कि जिस प्रकार चाण्डालों को वेद का उपदेश मना है, उसी प्रकार नीरस हृदय वाले मतान्तर प्रविष्ट पुरुषों के सामने प्रपत्तिरूप परम रहस्य को प्रतिपादन करना अनुचित समझा गया, और जिस शास्त्र का सहारा उन मतान्तर-वादियों ने लिया, उसी शास्त्र के सहारे उनको परास्त कर शास्त्रों के असली मतलब को सिद्ध, स्वयं अपने को अर्थात् श्रीरामानुज स्वामी जी को अभिमत प्रपत्ति रूप साधन को गद्यत्रय से प्रतिपादन कर दिया।

पूछने को पूछा जा सकता है कि वेदान्त में कहे हुए भक्ति रूपी मार्ग से प्रपत्ति में क्या विशेषतायें हैं? सुनिये—

इयं साधिकृताधिकारा, बिलम्ब्यफलप्रदा, सम्भावितप्रसाद साध्या, स्वरूपानुरूप; अननुरूप, प्राप्यविसदृशा च भवति।

इयं सर्वाधिकारा, सुफला, अविनिश्चतफलप्रदा, असम्भावितप्रमादा, सिद्धा, स्वरूपानुरूपा, प्राप्यसदृशा च भवति।

श्रीभाष्य में बताया गया है कि उपासनात्मक ज्ञान अर्थात् भक्ति में अधिकार की अपेक्षा है। उसका दरबाजा ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य मात्र को खुला है। परन्तु प्रपत्ति में सबका अधिकार है। इसमें कोई पावन्दी नहीं। वह फल विलम्ब से देती है, इसके फल में बिलम्ब नहीं होता है, वह दुःसाध्य है। यह प्रपत्ति आसानी से की जा सकती है। उसके करने में भूल हो सकती है क्योंकि उसका सारा भार कर्ता पर है, इसमें भूल की सम्भावना नहीं, क्योंकि इसको अनुष्ठान करने वाले व्यक्ति का भार ईश्वर पर है, जिससे भूल होना असम्भव है। उसका साधन करना होता है, यह स्वयं सिद्ध है।

जीवात्मा का स्वरूप ईश्वर-पारतन्त्र्य है। भक्ति के अनुष्ठान में स्वातन्त्र्य का भास होना जरूरी है। अतः वह अपने स्वरूप के अनुरूप नहीं। प्रपत्ति में सर्वदा ईश्वर के परतन्त्र होकर रहना

पड़ता है, इस वास्ते यह स्वरूप के अनुरूप है। ईश्वर के भी अनुरूप है। प्रपत्ति को यह समझ बैठना भूल है कि यह वेदान्त सिद्ध नहीं है। वेदों में उपनिषदों में इसका बड़ा महत्व है, इसकी बड़ी प्रशंसा है।

कहते हैं कि श्रीरंगनाथ भगवान की श्रीदेवी, भूदेवी के साथ सवारी निकल रही थी। श्रीरामानुज स्वामी भी उस सवारी के साथ थे। उनका मन संसार से एकदम उद्विग्न हो उठा और उन्होंने भगवान्के चरणों में पड़कर प्रपत्ति को प्रकाश करने वाले ये शब्द कहे—"लक्ष्मीपतेर्यतिपतेश्च-दयैकधाम्नोः" इत्यादि दया के एक समुद्र लक्ष्मीपति भगवान् और यतिराज श्रीरामानुज स्वामी के बीच जो रहस्य जगत् के हित के वास्ते शरणागति मन्त्र (द्वयमन्त्र) के सार रूप में हुआ वह हमारे लिये प्रकट हो।

भगवन्नारायणाभिमतानुरूपशरणमहं प्रपद्ये—

श्रीरामानुज स्वामीजी का कहना है कि हे लक्ष्मी जी ! आपका स्वरूप अर्थात् मंगलविग्रह, रूप अर्थात् सौन्दर्य, गुण और वैभव, भगवान् को अभिमत है। उनके अनुरूप है। बात यह है कि मोक्ष पाने के लिये भगवान् की शरणागति करने का विधान हमारी सम्प्रदाय में माना गया है। बिना महा-लक्ष्मी जी के पुरुषकार के शरणागति की सफलता में संदेह रहता है। वास्तव में देखा जाय तो जीव को मोक्ष केवल महालक्ष्मी के कारण ही होता है—

'लक्ष्म्या सह हृषीकेशो देव्या कारुण्यरूपया।
रक्षकः सर्वसिद्धान्ते वेदान्तेषु च गीयते॥

इस श्लोक में कह दिया गया है कि नारायण लक्ष्मी सहित ही होकर सर्वत्र रक्षक माने गये हैं। रक्षा शब्द से मतलब मोक्षदान का ही है। परमात्मा मोक्षप्रद है—यह सर्वशास्त्रों का सिद्धान्त है, परन्तु वह मोक्षप्रदत्व लक्ष्मी सहित नारायण का है केवल नारायण का नहीं, मोक्ष प्रदान के काम को मोक्ष रूप से भगवान् ही करने वाले हैं, परन्तु उनके साथ लक्ष्मी जी का प्रयोजक रूप से हाथ जरूर रहता है। लक्ष्मी जी के बिना मोक्षदान असम्भव हो जाता है। मोक्ष तो भगवत् कैङ्कर्य्य ही है। भग-वान्के साथ लक्ष्मी जी के होने से उस कैङ्कर्य्य में बढोतरी हो जाती है। उसमें रस आ टपकता है।

अतः श्रीवैष्णव सम्प्रदाय में शरणागति एवं प्रपत्ति का विशेष महत्व है।

हे केशव !

जिसके बंकिम होते ही, मच जाती प्रलय जगत में,
जो अन्तर्हित रहती है—सचराचर, गुप्त - प्रकट में;
उद्भव, स्थिति और प्रलय की, जो एक मात्र है जननी;
जिसके द्वारा निर्मित हैं—पाताल, गगन औ' धरणी;
जो कालरूप होकर भी, प्रतिपालक है जीवन की,
इच्छाएँ जिस पर निर्भर करती हैं जन-गण-गण-मन की;
अवलम्बित जिस पर सुरगण, भय कम्पित असुर-निकर हैं;
कह 'नेति - नेति' नित हारे, जिसको वेदों के स्वर हैं;
अनुकूल रहे प्रभु ! मुझ पर, वह भ्रू-भंगिमा तुम्हारी !
अब मेरे अन्तरतम की, हरले सारी अँधियारी !

कविवर राजेश दीक्षित, मथुरा

★

गताङ्क से आगे—

यतिराज सप्ततिः

रूपान्तर—पं० केशवदेव शास्त्री, वृन्दावन

कणादपरिपाटिभिः कपिलकल्पनानाटकैः
कुमारिलकुभाषितैर्गुरुनिबन्धनग्रन्थिभिः ।
तथागतकथाशतैस्तदनुसारिजल्पैरपि
प्रतारितमिदं जगत् प्रगुणितं यतीन्द्रोक्तिभिः ।। ३९ ।।

अन्वय—कणादपरिपाटिभिः, कपिलकल्पनानाटकैः, कुमारिलकुभाषितैः, गुरुनिबन्धनग्रन्थिभिः, तथागतकथाशतैः, तदनुसारिजल्पैः, अपि, प्रतारितम्, इदं, जगत्, यतीन्द्रोक्तिभिः प्रगुणितम् ।

अर्थ—कणाद गौतम की परिपाटियों से, कणाद ऋषि ने उलूक का उपदेश सुनकर वैशेषिक दर्शन का निर्माण किया । अतः उनका दर्शन "औलूक्य" नाम से प्रसिद्ध हुआ । गौतम को अक्षपाद महर्षि भी कहा जाता है, उन्होंने न्यायदर्शन का निर्माण किया । इन दोनों में घनिष्ठ सम्बन्ध है । ये दोनों महर्षि प्रमाण और प्रमेय के निरूपण में प्रत्यक्षादि प्रमाण और वेद शास्त्र के विरुद्ध अनेक अर्थों को हेत्वाभासों से समर्थन कर लोक में प्रचार किये हैं । जिससे लोक में बहुत धोखा हुआ । इनने असमीचीन सिद्धान्तों का वर्णन किया । इनके यहाँ चित्ररूप गुरुत्व, संख्या, परिमाण, पृथक्त्व संयोग विभाग परत्व आदि अप्रामाणिक गुणों को ये कल्पना कर प्रचार करते हैं, सामान्य विशेष समवाय और अभाव को अतिरिक्त पदार्थ मानते हैं । इच्छा द्वेष प्रयत्न सुख, दुःख वस्तुतः ज्ञान की ही अवस्था विशेष हैं, किन्तु ये इनको ज्ञान से भिन्न गुण मान कर प्रचार करते हैं ।

ज्ञान स्वभावतः प्रमाण बन जाता है अतः ज्ञान का प्रामाण्य स्वाभाविक है । दोष होने पर ज्ञान अप्रमाण बन जाता है । अतः ज्ञान का अप्रामाण्य औपाधिक है किन्तु ये लोग ज्ञान का प्रामाण्य और अप्रामाण्य दोनों भी स्वाभाविक नहीं हैं, दोनों भी दूसरे कारण से ही उत्पन्न होते हैं. अतः दोनों भी औपाधिक हैं । इनके सिद्धान्त को मानने पर अपौरुषेय वेद के प्रामाण्य में बाधा आती है ।

उपनिषद् प्रकृति को जगत् का कारण बतलाते हैं । किन्तु ये लोग इसे न मान कर परमाणुओं को जगत् का कारण मानते हैं । उपादान कारण ही दूसरी अवस्था को प्राप्त होने पर कार्य बन जाता है जैसे मिट्टी ही जब विलक्षण अवस्था को प्राप्त होती है तब घट बन जाती है । इससे पूर्व सिद्ध द्रव्य ही नूतन अवस्था को प्राप्त कर कार्य बन जाता है अतः सत्कार्यवाद माना जाता है । किन्तु ये लोग अवयवी नामक नूतन द्रव्य की उत्पत्ति बताते हुये असत्कार्यवाद का समर्थन करते हैं ।

वेद शास्त्रों में कहा गया है कि ग्यारह इन्द्रियाँ (पांच कर्मेन्द्रियाँ, पांचज्ञानेन्द्रियाँ और मन) ये

अहंकार से उत्पन्न होती हैं, किन्तु इन लोगों का कहना है कि कर्मेन्द्रियां हैं ही नहीं, ज्ञानेन्द्रियाँ अहंकार से नहीं बल्कि भूतों से उत्पन्न होती हैं। मन अहंकार से उत्पन्न नहीं होता वह तो नित्य है।

आकाश नीला है, यहाँ पक्षी उड़ते हैं, यहाँ मेघ हैं इस प्रकार आकाश प्रत्यक्ष है किन्तु ये लोग कहते हैं कि आकाश प्रत्यक्ष नहीं यह तो शब्द तन्मात्रा से उत्पन्न आकाश को ये लोग नित्य कहते हैं। अन्धकार को प्रकाश का अभाव ही अन्धकार है। इन्होंने ऐसे असमीचीन सिद्धान्तों का भी प्रचार किया जिनसे आत्म कल्याण में बाधा पड़ती है। आत्मा को अहम् अहम् कर प्रत्यक्ष अनुभव कर रहे हैं। इस स्वयं प्रकाश आत्मा को ये लोग जड़ बतलाते हैं। यह शास्त्र प्रतिपादित सिद्धान्त है जीव यदि विहित कर्मों का अनुष्ठान करे तो ईश्वर प्रसन्न होकर सद्गति देते हैं। यदि निषिद्ध कर्मों का अनुष्ठान करें तो ईश्वर रुष्ट होकर अधोगति में पहुँचाते हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि विहित कर्मानुष्ठान से होने वाला ईश्वर प्रसाद ही धर्म है। निषिद्धाचरण से होने वाला ईश्वर कोप ही अधर्म है। ये ईश्वर के प्रसाद-कोप को धर्माधर्म न मान कर धर्माधर्म नामक गुण जीवात्मा में उत्पन्न होते हैं। ईश्वर वेद प्रतिपाद्य हैं किन्तु ये अनुमान से ईश्वर को सिद्ध करते हैं। ईश्वर में सम्पूर्ण शक्तियाँ हैं, ये लोग शक्ति नामक पदार्थ को ही नहीं मानते हैं। ईश्वर सर्वविध कारण है किन्तु ये उसे निमित्त कारण ही मानते हैं। जीवात्मा की मुक्ति वह दशा है जिस अवस्था में पहुँचकर जीवात्मा अपने गुणों का पूर्ण विकास करता हुआ आनन्दमय सर्वविशेषणों से विशिष्ट परमात्मा का अनुभव करता हुआ परमात्मा के साथ परमसमता को प्राप्त हो जाता है किन्तु ये लोग मुक्ति जीवात्मा की वह दशा है जिसे प्राप्त कर अपने सभी विशेष गुणों को सर्वथा नष्ट कर पाषाण के समान बन जाता है।

इस प्रकार वैशेषिक और नैयायिकों ने वंचना कर संसार को दुर्गति में पहुँचाया। श्रीरामानुजाचार्य स्वामी जी ने इनका खण्डन कर वैदिक सिद्धान्तों का प्रचार कर सभी को आत्म कल्याण पथ का पथिक बना था। श्रीभाष्य में यह विषय "महद्दीर्घ" अधिकरण में किया है।

कपिल महर्षि सांख्य दर्शन के प्रवक्ता हैं। कवियों के द्वारा कल्पना करके जैसे नाटकों का प्रणयन होता है। हिरण्यगर्भ ब्रह्मा ने योगदर्शन को ग्रथित किया। आगे चलकर पतञ्जलि महर्षि ने योग सूत्रों में उस योगदर्शन को संगृहीत किया। नाटकों के समान कपिल, हिरण्यगर्भ पतञ्जलि और उनके अनुयायियों ने वैदिक तत्वों का निरूपण किया किन्तु उनमें अपनी नयी बातों के समावेश के साथ इन लोगों के मनगढन्त प्रचार से सर्व साधारण लोगों को बहुत ठगा गया—जल स्वभावतः शीतल होता है उसमें ऊष्णता अग्नि के कारण औपाधिक है। वैसे ही ज्ञान में अप्रामाण्य दोष के कारण होता है, अतएव अप्रामाण्य दोष के कारण होता है, अप्रामाण्य औपाधिक है। सांख्य और योगि लोगों का कहना है कि प्रामाण्य और अप्रामाण्य दोनों ही ज्ञान के स्वाभाविक धर्म हैं। किन्तु वे लोग इस तथ्य को न समझ कर सब ज्ञानों को प्रमाण और अप्रमाण्य कहते हैं।

लोकमें देखा जाता है कि एक ही कारण द्रव्य नवीन अवस्थाको प्राप्तकर नया कार्य बन जाता है, जैसे मृत्तिका ही पिण्ड, और पिण्डत्वावस्था को त्याग कर घट बन जाती है। घट फूटने पर कपाल, कपाल के भग्न होने पर धूल बन जाती है। इससे सिद्ध होता है कि मृत्तिका द्रव्य नव-नव अवस्थाओं को पाकर नये नये कार्य के रूप में परिणत हो जाता है। मृत्तिका द्रव्य पहले से रहता है, अवस्थाएँ उत्पन्न होती हैं और मिटती हैं किन्तु सांख्य-योगी कहते हैं कि अवस्थायें भी पहले से ही रहती हैं।

यदि इनका यह कथन सत्य माना जाय तो कार्य कारण भाव ही खण्डित हो जायगा अवस्थाओं को पूर्व सिद्ध मानते हैं।

यह प्रत्यक्ष सिद्ध है कि जड़ वस्तु चेतन से प्रेरित होने पर ही कार्य करने लगती है, स्वयं कुछ भी नहीं कर पाती है। जैसे बढ़ई हथियार बनाता है तभी चेतनके चलाने पर वृक्ष कटता है। कुम्हार से प्रेरित चक्र घट को उत्पन्न करता है। अतः जड़ प्रकृति भी ईश्वर से प्रेरित होकर सृष्टि करने में समर्थ होती है। किन्तु सांख्यों का कहना है कि प्रकृति के प्रेरक ईश्वर की आवश्यकता नहीं। प्रकृति जड़ होने पर भी स्वयं ही जगत् की सृष्टि करती है। योगी लोग प्रकृति को प्रेरित करने के लिये ईश्वर की जरूरत नहीं, ईश्वर में ऐश्वर्य स्वाभाविक नहीं है, विशुद्ध सत्वरूपी अन्तःकरण में रहने वाला ऐश्वर्य ईश्वर चैतन्य में केवल प्रतिविम्बित होता है जैसे जपा कुसुम में रहने वाली लालिमा स्फाटिक में प्रतिविम्बित होती है।

वेदान्त का सिद्धान्त है कि जीव अणु है। सांख्य और योगी कहते हैं कि जीव विभु अर्थात् व्यापक है। लोकमें जीव नाना प्रकार के ताप त्रय भोग रहे हैं। इससे जीवोंका भोक्तृत्व सिद्ध है। यह भोक्तृत्व तभी संगत होगा यदि जीव का कर्तृत्व भी होगा। पुण्य पाप करने वाला ही सुख दुःख भोगता है तब यह भी सिद्ध है कि जीव पुण्य पाप को करते हैं, अतएव सुख दुःख को भोगते हैं। सांख्य और योगी का कहना है कि जीवों का न कर्तृत्व है न भोक्तृत्व ही है, ये जीव सर्वदा नित्य मुक्त हैं। वेद शास्त्रों का मत है कि परब्रह्म के साथ परम साम्य प्राप्त हो जाना ही मोक्ष है किन्तु सांख्य और योगी का कहना है कि जीव का चिन्मात्र रूप में रहना ही मोक्ष है। श्रीरामानुजाचार्य जी ने श्रीभाष्य के रचनानुपपत्त्यधिकरण और योग प्रत्युक्त्यधिकरण में इनका खण्डन कर यथार्थ ज्ञान कराया।

कुमारिलभट्ट और गुरु प्रभाकर ने पूर्वमीमांसा दर्शन पर व्याख्या की। कुमारिल ने अपने कुत्सित मत का प्रचार किया, प्रभाकर ने अपने ग्रन्थों से मनगढन्त प्रचार से लोगों को भ्रम में डाल दिया। श्रीरामानुजाचार्य स्वामी जी ने श्रीभाष्य के देवताधिकरण में इनका खण्डन कर अपनी सूक्तियों से जगत को उज्जीवित किया।

तथागतो बुद्धः, तथागत अर्थात् बुद्ध के अनुयायी बौद्ध और जैन लोग अवैदिक अर्थों का प्रचार करते थे। इनका कथन केवल कथा मात्र है. उसने लोगों को बहुत प्रतारित किया। बौद्ध चार प्रकार के हैं। वैभाषिक, सौत्रन्तिक, योगाचार, और माध्यमिक। माध्यमिक का कहना है कि सम्पूर्ण जगत् शून्य है, ज्ञाता, ज्ञान, ज्ञेय आदि कुछ भी नहीं सब शून्य है। योगाचार-ज्ञाता ज्ञेय मिथ्या है किन्तु ज्ञान मात्र सत्य है। इसी योगाचार मत को वैदिक रूप देकर अद्वैतियों ने अपनाया। सौत्रान्तिक का कथन है कि जगत् सत्य है किन्तु प्रत्यक्ष नहीं है। जगत् क्षणिक है, एक क्षण भर रहता है। ज्ञान में अपना आकार देकर जगत् मिट जाता है। ज्ञान में चढ़े हुये आकार को देखकर जगत् का अनुमान किया जाता है। जैसे चित्र देखकर मृत मनुष्य का अनुमान किया जाता है। वैभाषिक का कहना है कि जगत् प्रत्यक्ष है किन्तु क्षणिक है, क्षण मात्र ही रहता है, दूसरे क्षण में वैसे ही दूसरा जगत् उत्पन्न होता है। ये बौद्ध आत्मनाश को ही मोक्ष कहते हैं। जैन लोग जगत् को भेद अभेद इत्यादि विरुद्ध धर्मों से आक्रान्त मानते हैं। इनके प्रचार से जगत् ऐसे भ्रम में फंस गया कि उससे निकलना कठिन हो गया। ऐसी स्थिति में श्रीरामानुज स्वामी जी ने श्रीभाष्य के तर्कपाद में तीन अधिकरणों द्वारा बौद्धों का खण्डन कर जैनाधिकरण में जैन सिद्धान्त का खण्डन कर सबकी दृष्टि खोली।

योगाचार बौद्ध सिद्धान्त का अनुसरण कर मायावादियों ने अपने सिद्धान्त का प्रचार किया। जैनोंका अनुसरण कर भास्कराचार्य आदिक ने अपने भेदाभेद सिद्धान्त का प्रचार किया। इनके कथन गप मात्र हैं। योगाचार का अनुकरण कर मायावादि कहने लगा कि ज्ञानरूपी परब्रह्म ही सत्य है, यह सम्पूर्ण प्रपञ्च झूँठा है। स्वप्न में सब पदार्थ जैसे मिथ्या हैं, वैसे ही अविद्या दोष के कारण ब्रह्म में यह प्रपञ्च दीख पड़ता है, अत: मिथ्या है। वेद, वर्ण, आश्रम, धर्माधर्म, इहलोक, परलोक सब मिथ्या हैं क्योंकि ये ब्रह्म के स्वप्न में दिखाई देते हैं। इन पदार्थों में विश्वास कर फंसे रहने से आत्मा का कल्याण नहीं होगा। वे वास्तव में भ्रान्त हैं। शीघ्र ही इन सबका परित्याग कर यहाँ तक इनकी वासना तक को परित्याग कर "अहं ब्रह्मास्मि" मैं ब्रह्म हूं इस अनुसन्धान में प्रत्येक को तल्लीन होना चाहिये। ऐसे "अहं ब्रह्मास्मि" समझने वाला साधक अविद्या में फंसे ब्रह्म का उद्धार कर देगा। जनता इनके जाल में फंस कर वेद, वर्ण, 'आश्रम आदिक में विश्वास करना मानो अपने भ्रमों को पकड़े रहना है।

इन्हें छोड़ो, जितना शीघ्र इनकी भावना तक का नाश होने से कल्याण होगा। संसार के इन सब झंझटों से छुटकारा पाकर "अहं ब्रह्मास्मि" इस वाक्यार्थ को समझना चाहिये। ऐसा सोच कर लोगों ने वेदों से अपनी श्रद्धा हटायी केवल "अहं ब्रह्मास्मि" इस वाक्यार्थ को गुरु से सीखकर उसकी आवृत्ति करने लगे। इससे जनतामें अनर्थकारी अहंकार बढ़ने लगा। भास्कराचार्य जीव ब्रह्म में भेदाभेद का समर्थन करते थे। इससे जीव गत सम्पूर्ण दोष ब्रह्म में चढ़ने लगें क्योंकि उनके मत में जीव और ब्रह्म एक हैं।

इस अनर्थ को देखकर श्रीरामानुज स्वामी जी ने श्रीभाष्य में इन सबका जिज्ञासाधिकरण समन्वयाधिकरण और आरम्भाधिकरण में परास्त कर जगत्कल्याणकारी वैदिक सिद्धान्त का इस प्रकार प्रतिपादन किया कि तत्व तीन है—चित्, अचित् और ईश्वर। चेतन जीव चित् कहलाता है, जड प्रपञ्च अचित् कहलाता है। इन दोनों का आधार नियामक और स्वामी सर्वेश्वर हैं। सर्वेश्वर इन प्रपञ्चों में अन्तर्यामी रूप से व्याप्त रहते हैं। ईश्वर नित्य निर्दोष तथा समस्त कल्याण गुणनिधि हैं। ये तीनों तत्व सत्य हैं। ईश्वर ने लोक कल्याण के लिये पूर्व कल्पस्थ वेदों का इस कल्प में ब्रह्माजी को उपदेश दिया। अपनी वेदाज्ञा से लोगों को धर्माधर्म का ज्ञान कराया। उन धर्माधर्मों के फलको भोगने के लिये इह लोक और परलोक की सृष्टि की। ये सभी पदार्थ, यह सम्पूर्ण जगत् सत्य है। ईश्वर की विभूति है। वेद विहित धर्माचरण करने पर जीवों की सद्गति है। ईश्वराज्ञा का उल्लंघन कर अधर्माचरण करने से जीवों को अधोगति में जाना होता है। जीवों का कर्तव्य है कि वे अपने अधिकार के अनुसार कर्म ज्ञान भक्ति और शरणागति से अपने परमात्मा को प्रसन्न करे। प्रसन्न ईश्वर जीवों को संसार बन्धन से छुड़ाकर परमपद ले जाकर वहाँ अपने परिपूर्णानुभव को प्रदान करेंगे। परिपूर्ण ब्रह्मानुभव से आनन्दित होकर वहाँ जीव उस अनुभव के परीवाह रूप में सर्वदेश, सर्वकाल, सर्वावस्थोचित सर्वविध कैङ्कर्य करते हुये कृतार्थ होगे। श्रीरामानुज स्वामी जी ने वेदानुसार सर्वसाधारणको उपायानुष्ठान का पाठ पढ़ाकर और कराकर उनको कृतकृत्य किया। (इस प्रकार श्रीभाष्यकार स्वामी जी ने जगत्कल्याणकारी सदिच्छा को सफल बनाया। इस श्लोक में यै सब अर्थ भरे हैं, उनको जान लेने पर ही श्लोक का अर्थ समझा जा सकता है) ॥ ३९ ॥

क्रमश:—

गतांक से आगे—

महाभारतामृतम्

—पं० श्रीकेशवप्रपन्न शास्त्री

●

श्रीबलरामजी को निकट पाकर युद्ध की इच्छा रखने वाला दुर्योधन बड़ा प्रसन्न हुआ। हलधर श्रीबलरामजी को देखते ही राजा युधिष्ठिर खड़े हो गये और बड़े प्रेम से उनकी पूजा की उन्हें बैठने को आसन दिया, उनके स्वास्थ्य का समाचार पूछा। बलरामजी युधिष्ठिर से बोले—राजन्! मैंने कुरुक्षेत्र तीर्थ का माहात्म्य ऋषियों से सुना है। वह पवित्र लोकों को देने वाला है। देव-ऋषि-ब्राह्मण सदा उसका सेवन करते हैं। जो मानव वहाँ युद्ध करते हुए अपना शरीर छोड़ते हैं उन्हें स्वर्ग-लोक मिलता है। अतः हम लोग समन्तपञ्चक तीर्थ में चलें। वह भूमि देवलोक में प्रजापति की उत्तरवेदी नाम से प्रसिद्ध है। बहुत अच्छा कहकर वे दोनों बलरामजी और युधिष्ठिर समन्तपञ्चक तीर्थ की ओर गये। उस समय दुर्योधन गदा हाथ में लिए पाण्डवों के साथ पैदल ही गया। वातिक और चारण भी उसकी प्रशंसा करने लगे। उस समय शंखों की ध्वनि से आकाश गूंज उठा। वह तीर्थ सरस्वती के दक्षिण तट पर स्थित है और सद्गति देता है। यहाँ कोई-सी भूमि ऊसर नहीं है। उसी स्थल पर युद्ध करना पसन्द किया। दोनों बीर तयारी के साथ युद्ध के लिये डट गये। दोनों एक दूसरे को इस प्रकार देखने लगे मानों भस्म कर डालेंगे। दोनों एक दूसरे को ललकारने लगे। वे दोनों पर्वत के समान दीख पड़ते थे। दुर्योधन ने कहा वीरो! आप सब बैठकर हम दोनों का गदा युद्ध देखिये। तब राजागण चारों ओर बैठ गये, बीच में श्रीबलरामजी बैठे। उनकी शोभा वैसी ही थी जैसे नक्षत्रों के मध्य चन्द्रमा की। दोनों वीर एक दूसरे को कठोर वचन कह रहे थे।

उस समय धृतराष्ट्र ने संजय से कहा—हे निष्पाप! मानव जन्म को धिक्कार है जिसका ऐसा दुःखद परिणाम होता है कि मेरे पुत्र के पास ग्यारह अक्षौहिणी सेना थी, उसने सब राजाओं पर हुक्म चलाया। सारी पृथ्वी का उपभोग किया, अन्त में उसको अकेले ही गदा हाथ में लेकर पैदल ही युद्ध में जाना पड़ा। आज वह अनाथ जैसा हो गया है। इसे भाग्य ही कह सकते हैं। जब दोनों एक दूसरे को ललकार रहे थे तब बड़े भयङ्कर अपशकुन हुए। बिजली की गड़गड़ाहट के साथ प्रचण्ड वायु, धूलि की वर्षा, सब दिशायें अन्धकार से आच्छन्न हो गयीं। सैकड़ों भयङ्कर उल्कायें भूतल पर गिरने लगीं। अमावस्या के बिना ही राहु ने सूर्य को ग्रस लिया। मृग दशों दिशाओं में दौड़ने लगे। सियारिनें अमंगल सूचक शब्द कर रही थीं। कूओं के जल बढ़ने लगे। ऐसे अपशकुन होने लगे। उस समय भीमसेन अपने बड़े भाई युधिष्ठिर से बोले—यह मन्दबुद्धि दुर्योधन किसी प्रकार से मुझे जीत नहीं सकता है। मैं सम्पूर्ण क्रोध उस पर डाल दूंगा जिससे आपका कंटक यह सदैव के लिए निकल जायगा। अपनी गदा से उसके शरीर के टुकड़े-टुकड़े कर डालूंगा। इसने मेरी शैय्या पर सांप डाला था, भोजन में विष मिलाया, प्रमाणकोटि के जल में गिराया था, लाक्षागृह में

जलाने की कोशिश की थी, भरी सभा में मेरा उपहास किया, सर्वस्वहर्ता, बारह वर्षों तक बनवास और एक वर्ष तक अज्ञातवास देने वाला, इन सभी दु:खों का अन्त कर दूँगा। आज इसकी आयु समाप्त हो गई है। शान्तनु के कुल का कलङ्क यह आज प्राण, लक्ष्मी, राज्य को सदा के लिए त्याग देगा। आज राजा धृतराष्ट्र अपने पापों का स्मरण कर रोयेंगे जिन्हें शकुनि के कहने से किये हैं। दुर्योधन! वारणावत नगर में जो कुछ हुआ उसे तू याद करले। तूने भरी सभा में रजस्वला द्रोपदी को अपमानित किया। शकुनि के द्वारा राजा युधिष्ठिर को जूएँ में ठग लिया। बनवास का कष्ट, दूसरी योनि में गये समान एक वर्ष बिताया। तेरे ही कारण श्रीभीष्मजी शिखण्डी के हाथ से मारे जाकर बाण शय्या पर सो रहे हैं। द्रोण, कर्ण, शल्य, शकुनि तो मार डाले गये। दुर्योधन ने कहा आज तेरा अन्त कर मैं अपने मनोरथ को पूरा करूँगा। भीमसेन ने गदा उठाकर धृतराष्ट्र पुत्र दुर्योधन पर वेग से आक्रमण किया।

उस समय हाथी चिंग्घाड़ने लगे। पाण्डवों के अस्त्र शस्त्र चमक उठे। दुर्योधन ने भी गर्जना करते आगे बढ़कर सामना किया। दो सांडों के समान वे भिड़ पड़े। रोमाञ्चकारी युद्ध होने लगा। वे रक्त से लथपथ हो गये। गदाओं के प्रहार से आग की चिनगारियां निकलने लगीं। जब वे थक गये तब दोनों ने दो घड़ी विश्राम किया। फिर लड़ने लगे। सब आश्चर्य चकित थे। वे पैंतरा बदलकर युद्ध करने लगे। दोनों आघात प्रतिघात करने लगे। युद्ध के मुहाने वाममण्डल में विचरते भीम पर पसली में दुर्योधन ने गदा मारी। उसके आघात से भीमसेन मूर्छित से हो गये, जिससे सोमक और पाण्डव बहुत उदास हो गये। भीम सावधान होकर उठे और दुर्योधन की पसली में आघात किया। दुर्योधन उस प्रहार से घुटने टेककर बैठ गया। सृंजयों ने हर्षध्वनि की। मस्तक पर आघात करने पर भी भीम अविचलित अवस्था में डटे रहे। भीम ने लोहमयी गदा लेकर प्रहार किया जिससे दुर्योधन की नस-नस ढीली हो गयी और वह कांपता हुआ पृथ्वी पर गिर पड़ा। थोड़ी देर में वह उठा और गदा के प्रहार से भीम को शिथिल कर धरती पर गिरा दिया। उसका कवच छिन्न-भिन्न हो गया। यह देख पाण्डव दुर्योधन को ललकारने लगे। भीम ने सबको रोक दिया और स्वयं ने वैसे ही आक्रमण किया। जैसे इन्द्र ने नमुचि पर आक्रमण किया था।

इस समय अर्जुन ने श्रीकृष्ण से पूछा—जनार्दन! इनमें कौन गुणवान है? कृष्ण बोले—इन दोनों को शिक्षा तो एक-सी मिली है। पर भीम बल में अधिक है। यह दुर्योधन भीम की अपेक्षा अभ्यास और प्रयत्न में बढ़ा चढ़ा है। यदि भीम धर्मपूर्वक युद्ध करते रहे तो कदापि नहीं जीतेंगे। अन्याय से युद्ध करने पर इसे मार डालेंगे। इन्द्र ने माया से ही विरोचन को परास्त किया था। इन्द्र ने वृत्रासुर के तेज को नष्ट कर दिया था। अतः भीम भी यदि मायामय पराक्रम का आश्रय ले तो जीत सकता है। भीम ने पहले प्रतिज्ञा की थी कि मैं तेरी दोनों जांघ गदा से तोड़ डालूँगा। उसी को करे। युधिष्ठिर ने हमें संशय में डाला है—युद्ध को जूएँ का दाव बनाकर बड़ी ना समझी की है। शुक्राचार्य की नीति श्लोक याद आ रहा है सुनो—"मरने से बचे हुए शत्रुगण यदि युद्ध में जान बचाने की इच्छा से भाग गये हों और पुनः युद्ध के लिए लौटने लगे हों तो उनसे डरते रहना चाहिए, क्योंकि वे एक निश्चय पर पहुँचे हुए होते हैं (उस समय वे मृत्यु से भी नहीं डरते हैं)' जो जीवन की आशा छोड़कर साहस पूर्वक युद्ध करते हैं उनके सामने इन्द्र भी नहीं ठहर पाता है। जिसकी सेना मारी गयी, परास्त हो गई और अब राज्य पाने से निरास हो चुका दुर्योधन

तालाब में जा छिपा ऐसे हतास शत्रु को कौन बुद्धिमान समर भूमि में द्वन्द्व युद्ध के लिए आमन्त्रित करेगा। दुर्योधन ने तेरह वर्ष तक निरन्तर गदा युद्ध का अभ्यास किया है। श्रीकृष्ण की यह वाणी सुनकर अर्जुन ने अपनी बायीं जंघा को ठोका। इस संकेतको पाकर भीमसेन यमक और भी दक्षिण वाम, गोमूत्रक मण्डलों से विचरने लगे। इसी प्रकार दुर्योधन भी। अब वे दोनों एक दूसरे पर प्रहार करने लगे। दोनों का शरीर खून से यथपथ था। अर्जुन ने छिद्र की ओर संकेत किया। भीम ने गदा का प्रहार किया लेकिन व्यर्थ गया। दुर्योधन के प्रहार से भीम के शरीर से रक्त की धार निकल पड़ी और मूर्छित हो गये। थोड़ी देर में वे स्वस्थ हो युद्ध में डट गये। अबकी बार बड़े वेग से भीम ने दुर्योधन की जाँघ पर प्रहार किया, और उनको तोड़ डाला दुर्योधन पृथ्वी पर गिर पड़ा। पृथ्वी काँपने लगी। कोलाहल मच गया। भेरी, शंखों, मृदंगों का शब्द सुनायी देने लगा। उस समय स्त्रियों में पुरुषत्व और पुरुषों में स्त्रीत्वके सूचक लक्षण होने लगे। अब सिद्ध, वायुचारी= वातिक, और चारण उन दोनों की प्रशंसा करते हुए जैसे आये थे वैसे चले गये।

दुर्योधन विशाल वृक्ष के समान धराशायी हो गया यह देख पाण्डव प्रसन्न हुए और उसके पास जाकर देखने लगे। भीम ने कहा—खोटी बुद्धि वाले मूर्ख! तूने पहले मुझे बैल-बैल कहा था। रजस्वला द्रोपदी को सभा में नग्न करना चाहा था, हम लोगों का उपहास किया था। उसका फल आज तूने प्राप्त कर लिया। ऐसा कहकर उसके मुकुट को ठुकराया, उसके मस्तक पर भी पैर से ठोकर मारा। छल-कपट करना, घर में आग लगाना, जूआ खेलना, ठगी करना, हमारा काम नहीं है, हम तो अपने बाहुबल पर भरोसा करते हैं। जिन धृतराष्ट्र पुत्रों ने हमसे पहले थोथे तिलों के समान नपुंसक कहा था वे सब मारे गये अब हमें स्वर्ग मिले या नरक मिले इसकी चिन्ता नहीं। राजा दुर्योधन के कन्धे से लगी उसकी गदा लेली और उसका शिर कुचलकर उसे छलिया और कपटी कहा। यह भीम का आचरण सोमकों और युधिष्ठिर को अच्छा न लगा। उसकी निन्दा की। युधिष्ठिर ने भीम से कहा—अब तुम्हारा कार्य पूरा हो गया। अब तुम्हें यह कुकृत्य नहीं करना चाहिए। इसकी ग्यारह अक्षौहिणी सेना मारी गई, यह भी मारा गया, इसको पिण्ड भी हम ही देंगे, युधिष्ठिर दुर्योधन के पास गये और विलाप करते हुए बोले तात! 'नूनं पूर्वकृतं कर्म सुघोरमनुभूयते' निश्चय ही सब लोग अपने पहले के किये हुए भयङ्कर कर्मों का ही परिणाम भोगते हैं। तुमने लोभ, मद, अविवेक के कारण अपने अपराध से ऐसा सङ्कट प्राप्त किया है। यह मैं 'दिष्टं मन्ये दुरत्ययम्' दैव का दुर्लङ्घ्य विधान ही मानता हूं। मैं भाइयों, पुत्रों, पौत्रों की शोक विह्वला विधवाओं को कैसे देख सकूँगा। वे हमारी निन्दा करेंगी। युधिष्ठिर अत्यन्त दुःखी हो विलाप करने लगे।

भीम के उस कुकृत्य पर श्रीबलरामजी को बड़ा क्रोध हुआ। उन्होंने बड़ा आर्तनाद करते हुए भीम से कहा—भीम! तुम्हें धिक्कार है। इस धर्मयुद्ध में नाभी के नीचे जो प्रहार किया, यह गदायुद्ध में कभी नहीं देखा गया। श्रीबलरामजी ने श्रीकृष्ण से कहा—राजा दुर्योधन मेरे समान बलवान् था। गदायुद्ध में उसके समान कोई नहीं था, यहाँ केवल दुर्योधन ही नहीं गिराया गया, मेरा भी अपमान किया गया है। वे बलरामजी हल उठाकर भीम की ओर दौड़े। श्रीकृष्ण ने अपनी भुजाओं से प्रयत्न पूर्वक पकड़ा। उस समय श्रीकृष्ण ने बलरामजी से कहा—भैय्या! अपनी उन्नति छः प्रकार की होती है। अपनी वृद्धि, मित्र की वृद्धि और मित्र के मित्र की वृद्धि। शत्रु पक्ष में शत्रु

की हानि, शत्रु के मित्र की हानि, शत्रु के मित्र के मित्र की हानि। शुद्ध पुरुषार्थ का आश्रय लेने वाले पाण्डव हमारे मित्र हैं। बुआ के पुत्र होने से हमारे अपने हैं। शत्रुओं ने इनके साथ बहुत छल-कपट किया था। भीम ने पहले प्रतिज्ञा की थी और महर्षि मैत्रेय ने दुर्योधन को पहले ही शाप दे रखा था कि भीम अपनी गदा से तेरी दोनों जांघें तोड़ देगा। भैय्या! इसमें भीम का कोई दोष नहीं है। अतः आप इतना क्रोध न कीजिये। आप समझ लीजिये कि कलियुग आ गया। इसी दुर्योधन ने कर्ण को आज्ञा दी थी, जिससे वीर अभिमन्यु के धनुष को पीछे से आकर काटा था। वह रथहीन था, उसे निहत्था करके इसने मार डाला। भीम की प्रतिज्ञा तेरह वर्षों से चल रही थी। दुर्योधन ने उसे क्यों भुला दिया। दुर्योधन ऊपर उछलकर भीम को मारना चाहता था। भीम को मौका मिल गया, उसने जांघों में ही प्रहार किया। परन्तु बलरामजी को सन्तोष नहीं हुआ। उन्होंने कहा—दुर्योधन को अधर्म से मारकर भीम इस संसार में कपटी युद्ध करने वाला योद्धारूप में विख्यात होगा। दुर्योधन सरलता से युद्ध कर रहा था। अतः वह सनातन सद्गति को प्राप्त होगा।

यह कह गौरकान्ति श्रीबलरामजी रथ पर बैठ द्वारिका की ओर चले गये। यह देख पांचाल वृष्णिवंशी तथा पाण्डव उदास हो गये। युधिष्ठिर बहुत दुःखी थे उस समय श्रीकृष्ण उनसे बोले—आप चुप हो, अधर्म का अनुमोद कर रहे हैं। भीम पैर से दुर्योधन के मस्तक को कुचल रहे हैं और आप देख रहे हैं। युधिष्ठिर बोले—श्रीकृष्ण! भीम का यह आचरण मुझे भी अच्छा न लगा। धृतराष्ट्र के पुत्रों ने हमें अपने कपट जाल का शिकार बनाया और हमें कटुवचन सुनाये, बन में भेजा, यही समझ मैंने आचरण की उपेक्षा की है। मैंने यह सोचा है कि कामी, क्रोधी, लोभी भीम अपनी इच्छा पूरी करले। यह सुन श्रीकृष्ण ने बड़े कष्ट से अच्छा, ऐसा ही सही कहा। भीम का अनुमोदन श्रीकृष्ण, अर्जुन ने किया। भीम ने युधिष्ठिर से कहा—महाराज! आपके राज्य के काँटे नष्ट हो गये अब आप धर्म का पालन करें। यह सुन युधिष्ठिर बोले—भीमसेन! सौभाग्य की बात है कि तुमने वैर का अन्त कर दिया। श्रीकृष्ण के मत का आश्रय लेकर हमने सारी पृथ्वी जीत ली।

भीम के द्वारा दुर्योधन को मारा गया देख पाण्डव, पाञ्चाल, सृंजय अपनी प्रसन्नता व्यक्त कर रहे थे। भीम से प्रसन्नता की बातें करने लगे। श्रीकृष्ण ने कहा—वीरो! मरे हुए को मारना उचित नहीं। यह तो उसी समय मर चुका था जब लोभ में फँसकर पापियों को अपना सहायक बनाया। विदुर, द्रोण, कृप, भीष्म सृंजय जैसे महात्माओं के कहने पर भी पाण्डवों को उनका पैतृक भाग नहीं दिया। चलो अपने शिविर की ओर चलें। श्रीकृष्ण के ये बचन सुनकर दुर्योधन अपने दोनों हाथ पृथ्वी पर टेककर चूतड़ के सहारे बैठ गया और उसने श्रीकृष्ण की ओर टेड़ी भौंहें करके आधा शरीर उठाकर श्रीकृष्ण को पीड़ा देने वाले बचन कहना आरम्भ किया—ओ कंस के दास के बेटे! मैं जो गदायुद्ध में अधर्म से मारा गया, इस कुकृत्य के कारण तुम्हें क्या लज्जा नहीं आती। भीम को मेरी जांघें तोड़ डालने का जूठा स्मरण दिलाते हुए तुमने अर्जुन से जो कहा क्या वह मुझे ज्ञात नहीं है? सरलता से धार्मिक युद्ध करने वाले सहस्रों भूमिपालों को कुटिल उपायों से मरवाकर तुम्हें लज्जा नहीं आती है और न इन कुकर्मों पर घृणा ही होती है। भीष्मजी को तुमने शिखण्डी को आगे कर बध कराया, अश्वत्थामा नामक हाथी को मरवाकर अश्वत्थामा मारा गया कहकर द्रोणाचार्य के हाथों से शस्त्र नीचे डलवा दिये। क्या तुम भूल गये। नृशंस धृष्टद्युम्न ने पराक्रमी आचार्य को उस अवस्था में मार गिराया जिसे तुमने अपनी आँखों से देखा, किन्तु मना नहीं किया।

अर्जुन के वध के लिये मांगी इन्द्र की शक्ति को तुमने घटोत्कच पर छुड़वा दिया, तुमसे बढ़कर महापापी कौन हो सकता है। भूरिश्रवा का हाथ कट गया था। वह आमरण अनशन लेकर बैठे हुए थे, तुम्हारे संकेत से सत्यकि ने उनका वध किया। कर्ण अर्जुन को जीतने की इच्छा से उत्तम पराक्रम कर रहे थे, उस समय नागराज अश्वसेन को जो कर्ण के बाण के साथ जा रहा था, तुमने अपने प्रयत्न से विफल कर दिया। कर्ण के रथ का पहिया गढ्डे में गिर गया, उस समय वह उसे उठाने में व्यग्र था तुम लोगों ने उसे मार गिराया। तुम जैसे अनार्य ने कुटिल मार्ग का आश्रय लेकर मेरे कर्ण तथा भीष्म और द्रोण का बध कराया।

यह सुन श्रीकृष्ण बोले—गान्धारीनन्दन! तुमने पाप के रास्ते पर पैर रखा था इसीलिए तुम भाई, पुत्र, बान्धव, सेवक सुहृद्वर्ग सहित मारे गये। दुष्कर्म परायणों की यही गति होती है। तुम ने शकुनिकी कपटपूर्ण सलाह मानकर मेरे मांगने पर भी पाण्डवों को उनकी पैतृक सम्पत्ति,उनका राज्य लोभवश देना नहीं चाहा, इसी अधर्म का यह फल है, और भी अनेक अधर्म तुम्हारे इसारे पर तुम्हारे पक्षधरों ने किये। विराट नगर में अर्जुन की कृपा से भीष्म, कर्ण. द्रोण, अश्वत्थामा, कृप आदि के प्राण बचे। जिन्हें तुम हमारे दोष बता रहे हो वे सब तुम्हारे दोष हैं। तुमने बृहस्पति, शुक्राचार्य के नीति वाक्यों को नहीं सुना न वृद्धों की सेवा ही की। तुम में लोभ और तृष्णा बड़ी मात्रा में भरी थी। उसका परिणाम तुम्हें भोगने को मिला। अरे कृष्ण! मैंने विधि से अध्ययन किया। दान दिये, शासन किया। शत्रुओं के मस्तक पर पैर रखा, मेरे समान उत्तम अन्त किसका हुआ है। यह कहते ही उस पर पुष्प वृष्टि हुई। विपक्षी लज्जित हुए। उस समय श्रीकृष्ण ने पांचजन्य, अर्जुन नें देवदत्त नामक, युधिष्ठिर ने अनन्त विजय, भीम ने पौण्ड्र, नकुल ने सुघोष, सहदेव ने मणिपुष्पक नामक शंख बजाया, धृष्टद्युम्न ने जैत्र नामक, सात्यकि ने नन्दिवर्धन नामक शंख बजाये। क्रमशः

रंगलीला और श्रीकृष्ण

उस दिन होली का पर्व था, सारी गोपियां अत्यन्त प्रसन्न थीं। एक गोपी ऐसी थी जिसके पास रंग-गुलाल खरीदने के लिए पैसे नहीं थे। वह अपने घर के द्वार पर अत्यन्त उदास और चिन्तित बैठी हुई थी। एकाएक वह देखती क्या है कि श्रीकृष्ण उसकी ओर चले आ रहे हैं। श्रीकृष्ण ने उसका हाथ पकड़ते हुए कहा, 'तुम्हें अपनी गरीबी पर दुःखी नहीं होना चाहिए। तुम्हारी आत्मा में इतने रंग हैं कि इस नगर का कुल रंग मिलकर भी उससे कम न होगा।' जैसे ही गोपीने श्रीकृष्ण पर दृष्टि डाली, उसने देखा कि उसका प्रभाव निष्फल नहीं है। उसकी दृष्टि डालते ही श्रीकृष्ण सर से पैर तक हरे रंग से रंग गये।

वह जोर से चिल्ला पड़ी—'हे स्वामी, हे स्वामी। आपने हमारी कमजोर, पीली आंखों को कैसी शक्ति दे दी है कि वे रंगों के रचनाकार को रंग से सराबोर कर सकती हैं। श्रीकृष्ण बोले, 'गोपी, आज से मैं तुम्हें रंगीन गोपी रंगलीला कहकर पुकारा करूंगा. क्योंकि तुम्हारी आत्मा भक्ति से परिपूर्ण है। और मैं तुम्हारे प्रेम के रंग से रंग गया हूँ।' परमेश्वर ही हमारे जोवन को रंगमय या रंगीन बनाते हैं। भक्ति के बिना हम लोगों का जीवन पीला और नीरस हो जाता है। आपकी अनुकम्पा के बिना हम लोगों का जीवन बिना दाने के भूसे जैसा हो जाता है। परमेश्वर के चिन्तन के बिना मनुष्य एक मृत शरीर के अतिरिक्त और कुछ नहीं होता। ऐसा मनुष्य एक ऐसा मूर्ख होता है जिसे स्वर्ग की एक भी किरण ने स्पर्श नहीं किया है। हे परमेश्वर, आप कृपाकर हमारी शुष्क और नीरस आत्मा में कुछ रंग भर दें ताकि हम लोग आपको अपनी भावना के रंग में देख सकें। हमें रंग दें, हमें कोरा और नीरस न बना रहने दें। हे श्रीकृष्ण! हमारी आत्मा में रंग भर दें. हमारी बातचीत और हमारे विचार शक्ति सबको रंगमय बना दें।

—प्रो० प्रेमा पांडुरंगन

स्वरविज्ञान और बिना औषध रोग निवारण

—आचार्य नरेशचन्द्र शर्मा, वृन्दावन

विश्व के उत्पादक, विधाता ने मनुष्य जन्म के साथ एक ऐसा आश्चर्यजनक एवं कौशल पूर्ण उपाय रच दिया है जिसे जान लेने पर सांसारिक किसी भी कार्य में असफलता का दुःख नहीं भोगना पड़ता है। यह विषय जिस शास्त्र में है वह स्वर शास्त्र है। स्वर शास्त्र जानने के पहले श्वाँस प्रश्वास की गति के सम्बन्ध में सम्यक् ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है।

"काया नगरमध्ये तु मारुतः क्षितिपालकः"

देह रूपी नगर में वायु राजा के समान है। प्राणवायु नि.श्वास प्रश्वास के नाम से पुकारा जाता है। वायु ग्रहण करने का नाम नि श्वास और परित्याग करने का नाम प्रश्वास है। यह श्वांस सब समय एक समान नहीं चलता है। कभी बांये कभी दाहिने कभी दोनों नासिका छिद्रों से श्वांस चलता है। बांये नासिका से चलने को इड़ा और दाहिने नासिका से चलने को पिंगला और दोनों नासापुटों से श्वांस चलने को सुषुम्ना कहते हैं। प्रातः काल सूर्योदय के समय से ढ़ाई-ढ़ाई घड़ी के हिसाब से एक नासिका श्वांस चलता है। इसका नियम इस प्रकार से है—

आदौ चन्द्रः सिते पक्षे भास्करस्तु सितेतरे ।
प्रतिपत्तो दिनान्याहु स्त्रीणि त्रीणि क्रमोदये ।।

(पवनविजय स्वरोदय)

शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा को तीन-तीन दिन के हिसाब से चन्द्रनाड़ी अर्थात् बांयीं नासिका से तथा कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा को तीन दिन की वारी से सूर्य नाड़ी से अर्थात् दाहिनी नासिका से श्वांस चलता है अर्थात् शुक्लपक्ष की प्रतिपदा द्वितीया, तृतीया, सप्तमी, अष्टमी. नवमी, त्रयोदशी, चतुर्दशी पूर्णिमा को सूर्योदय के समय पहले बायीं नासिका से चतुर्थी, पञ्चमी, षष्ठी, दशमी, एकादशी, द्वादशी को इन छः दिनों में पहले दाहिनी नासिका से श्वांस चलना प्रारम्भ होता है, वह ढ़ाई घड़ी तक रहता है फिर दूसरी नासिका मे श्वांस चलने लगता है। कृष्णपक्ष की प्रतिपदा द्वितीया तृतीया, सप्तमी, अष्टमी, नवमी, त्रयोदशी, चतुर्दशी, अमावस्या इन नौ दिनों में सूर्योदय के समय पहले दाहिनी नासिका से और चतुर्थी, पञ्चमी, षष्ठी, दशमी, एकादशी, द्वादशी इन छः दिनों में सूर्योदय काल में पहले बांयी नासिका से श्वांस प्रारम्भ होता है और ढ़ाई घड़ी तक रहता है फिर दूसरी नासिका से श्वांस प्रारम्भ होता है। यही मनुष्य जीवन की श्वांस की गति का नियम है। 'वहेत्तावद् घटीमध्ये पञ्चतत्वानि निर्दिशेत्' प्रतिदिन रात और दिन की ६० घड़ी में श्वांस चलता है, उसमें पञ्च तत्वों का उदय होता है. इन श्वांस की गतियों को जानकर जो कार्य करता है उसका शरीर स्वस्थ रहता है और दीर्घजीवी होता है, सब कार्यों में सफलता होती है, सुखपूर्वक यात्रा पूरी होती है।

वाम नासिका का श्वांस फल

जिस समय इडा नाड़ी बायीं नासिका से श्वांस चलता हो, उस समय स्थिर कर्मों को करना

चाहिये । जैसे अलंकार धारण करना, दूर की यात्रा, आश्रम प्रवेश, राज मन्दिर महल बनाना, द्रव्यादि ग्रहण करना, तालाब कुआँ जलाशय बनाना, देवस्तम्भ आदि की प्रतिष्ठा करना, यात्रा, दान, विवाह तथा वस्त्र धारण करना, आदि शुभ कार्य करने चाहिये । सिद्धि मिलती है । परन्तु वायु अग्नि आकाश तत्व के समय उक्त कार्य नहीं करना चाहिये ।

दक्षिण नासिका के श्वांस का फल

जिस समय पिंगला नाडी अर्थात् दाहिनी नाक से श्वांस चलता हो उस समय कठिन कर्म करने चाहिये, जैसे कठिन क्रूर विद्या का अध्ययन, अध्यापन स्त्री संसर्ग, नौका आरोहण, तन्त्रादि मतानुसार वीर मन्त्रादि सम्मत उपासना, वैरी को दण्ड, शास्त्राभ्यास गमन, पशुविक्रय, ईंट पत्थर काठ रत्नादि घिसना, संगीत अभ्यास, किले पहाड़ पर चढ़ना, हाथी घोड़ा रथ आदि की सवारी सीखना, व्यायाम, षष्ट कर्म साधना, यक्षिणी भूतादि सेवन, लिपि लेखन, दान क्रय बिक्रय, युद्ध भोग, राजदर्शन, स्नाव, आहार आदि करना चाहिये ।

सुषम्ना श्वांस का फल

दोनों नासिकाओं से श्वास चलता हो, उस समय कोई कार्य नहीं करना चाहिये, नहीं तो निष्फल होता है । केवल योगसाधन धारणा, ध्यान आदि द्वारा भगवत् स्मरण करना चाहिये और उस समय शाप वरदान भी सफल होता है ।

अभिमान से बचो

—स्वामी रामसुखदास जी महाराज

ज्ञान के संचय की इतनी आवश्यकता नहीं है, जितनी उसके सदुपयोग की आवश्यकता है । पैसों के वस्तुओं के संचय की महिमा नहीं है, प्रत्युत उनके सदुपयोग की महिमा है । आपको जितना मिला है, उतने से पूरा उद्धार हो सकता है । भगवान ने मनुष्य जन्म दिया है तो उद्धार की सामग्री भी पूरी दी है । वास्तव में देखा जाय तो सामग्री बहुत ज्यादा दी है । उद्धार के लिये जितनी योग्यता चाहिये, उससे अधिक योग्यता दी है । उद्धार के लिये जितना समय चाहिये, उससे अधिक समय दिया है । उद्धार के लिये जितनी समझ चाहिये, उससे अधिक समझ दी है । कृपणता, कंजूसी नहीं की है भगवान् ने ! इसलिये आपके पास जितनी सामग्री है, जितना समय है, जितनी समझ है, जितनी सामर्थ्य है, उसको पूरी लगा दो तो परमात्मा की प्राप्ति हो जायगी—इसमें किंचिन्मात्र भी सन्देह नहीं है । जितनी सामग्री; जितना धन आपके पासमें है, उसका आप सदुपयोग करो तो कल्याण हो जायगा । उसका सदुपयोग न करके संचय करोगे तो इस जन्म में तो कल्याण होगा नहीं, आगे के जन्म में भी शायद ही हो ! जितना धन आपके पास है, उससे ज्यादा की जरूरत नहीं है । इन्कम पर टैक्स होता है, माल पर जगात होती है । जितनी इन्कम है, उतना टैक्स होगा । जितना माल है, उतनी जगात होगी । अत: अधिक धन की इच्छा करनी आफत करनी है, अधिक समय की इच्छा करनी आफत करनी है, अधिक सामग्री की इच्छा करनी आफत करनी है ।

समझ (ज्ञान) में एक बिलक्षण बात है कि जितनी समझ है, उसका सदुपयोग करोगे तो वह समझ अपने-आप बिलक्षण हो जायगी; बिना पढ़े लिखे, बिना गुरु के स्वत: बढ़ जायगी ! परन्तु कोरा पोथा पढ़कर पण्डित बन जाओ तो वाह-वाह हो जायगी, पर हाथ कुछ नहीं आयेगा, प्रत्युत एक अभिमान ही पैदा हो जायगा । ★

भगवान् के रूप

लेखक–डॉ॰ जयनारायण मल्लिक, बिहार

*

संसार में जातियाँ, कौम, भाषायें, व्यवसाय, भगवान को देखने के और पूजा करने के तरीके अनेक (भिन्न-भिन्न) हैं, पर सारे संसार के (सभी मानवों के) भगवान् एक हैं। उनके पाँच रूप हैं। माया से पृथक्, त्रिपाद्विभूति के और संसार के स्वामी श्रीमन्नारायण भगवान् हैं। वे एक हैं और श्रीदेवी (लक्ष्मी), भूदेवी, तथा नीला देवी के पति हैं, माया उनकी दासी है। वे वैकुण्ठनाथ परब्रह्म परमेश्वर हैं।

भगवान् वैकुण्ठनाथ माया या प्रकृति से सर्वथा पृथक् श्रीमन्नारायण भगवान् एक है। यह भगवान् का परब्रह्म रूप है। इसके बाद क्षीरशायी या शेषशायी भगवान् हैं, इसमें चार रूप हैं (चतुर्व्यूहाः), इसमें षड्गुण सम्पन्न भगवान् वासुदेव हैं, जो संसार के स्वामी हैं, और दो-दो गुण सम्पन्न प्रद्युम्न तथा अनिरुद्ध एवं संकर्षण हैं (त्रिदेव) के अन्तर्गत (ब्रह्मा=सृष्टिकर्त्ता, विष्णु=पालनकर्त्ता एवं महादेव रुद्र=संहारकर्त्ता) हैं ये तीनों प्रद्युम्न, अनिरुद्ध और संकर्षण, जो केवल दो-दो गुण सम्पन्न हैं, संसार के मालिक नहीं हैं। मालिक तो केवल षड् गुण सम्पन्न भगवान् वासुदेव हैं, ये तीनों तो उत्पत्ति, पालन और संहार के लिये व्यवस्थापक मात्र हैं, इसीलिये इन तीनों में केवल दो-दो गुण हैं (मालिक तो केवल षड्गुण सम्पन्न भगवान् वासुदेव हैं), भगवान् का तीसरा रूप वैभव हैं, जो माया से पृथक् भगवान् के अवतार मात्र हैं। अवतार दो प्रकार के हैं, अंशावतार (जैसे मस्य, कुर्म, वाराह, नृसिंह, वामन, बुद्ध, कल्कि इस भूमण्डल पर) तथा रामावतार एवं कृष्णावतार पूर्णावतार के रूप में। इन दोनोंमें भी राम मर्यादा पुरुषोत्तम थे और कृष्ण लीला विग्रह में थे। भगवान् बुद्ध ने बतलाया कि मानवता के दुश्मन पशु नहीं पशुता है जो मानवता को भोग वासना की ओर खींचती है, अतः हिंसा या मांस-भक्षण खराब है। अतः मांस भक्षी ब्राह्मणों ने छागरों की एवं पशुओं के बलिदान की प्रथा को जारी रक्खा (क्योंकि छागरों के बलिदान के बिना मांस-भक्षण उनका कैसे होता। अतः इन्होंने भगवान् बुद्ध को वेद-विरुद्ध साबित करा दिया और भगवान् बुद्ध के स्थान पर सङ्कर्षण को ला रक्खा और जगन्माता को खुश करने के लिये जगन्माता की एक सन्तान, छागरों बलि देनी जारी रक्खी। भगवान् का चौथा रूप अन्तर्यामी रूप है, जो भगवान् का सर्वज्ञ रूप सर्वत्र है और एकान्त स्थल में भी पाप करने से भगवान् जान जाते हैं। "सब नर हैं भगवत्स्वरूप।" प्रत्येक नर नारी का शरीर परमात्मा का मन्दिर है, अतः मानवता की सेवा भगवत्कैंकर्य है। संसार में सबों को सुख देना और सबों की भलाई करना कर्त्तव्य है। भगवान् का पांचवाँ और अन्तिम रूप है अर्चावतार (मूर्त्तियाँ) मनुष्य अर्चावतार को अपने मन के मोताविक बना लेता है, केवल शालग्राम जैसा है, वैसा ही रहेगा। केवल मन्दिर का मार्जन, भगवान् के पूजा के वर्त्तन मांजना, फूल-तुलसी तोड़ना, स्नाम, पूजा, पाठ, धूप, दीप, आरती, भोग लगाना, प्रसाद सेवन अर्चावतार के कैङ्कर्य हैं।

जीवन के सभी कार्यों को कर्त्तव्य की प्रेरणा से भगवान् की प्रसन्नता के निमित्त भगवत्कैङ्कर्य समझ कर करते जाना उचित है। मोक्ष का सबसे सुगम साधन भगवान् की शरणागति या प्रपत्ति है, भगवान् का चिन्तन, स्मरण और भगवान् के श्रीचरणों पर आत्म-समर्पण, भगवान् की सेवा में अपने तन, मन, धन को लगा देना। भगबान् की शरणागति (भगवान् हमें जिधर ले जायें। आखिर वे हमारी रक्षा तो करेंगे ही। रक्षिष्यतीति विश्वासः। वे अशरण-शरण, पतित पावन हैं। 卐

गतांक से आगे

श्रीभाष्यकार-भगवान्-श्रीरामानुजाचार्य

रचयिता—पं० श्रीनारायणदासजी भक्तमाली 'मामाजी', बक्सर वाले

बन्द हो फाटक आधी रात,
शब्द हो घर—घर—घर-घर्रात,
श्रीरंगम् मन्दिर माँहि सुनात,

कवित्त—लक्ष्मी जू ने व्यौरो पाय बेगि ही बुलाय लिये,
चले सब त्यागि के कूरेश औ आण्डाल है।
मातु जू की कृपा पाय बसि गे श्रीरंगम् में,
उञ्छ वृत्ति ही ते होत जीवन निहाल है।
एक दिन वर्षा में सकै नहीं पाय कछु,
पत्नी के मन में प्रसाद पर्यो ख्याल है।
प्रभु ने तुरन्त ही प्रसाद पठवाय दिये,
वाही के प्रताप इन्हैं मिले युग लाल हैं॥

दोहा—भट्ट पराशर व्यास दोउ*, नाम धरे यतिराज ।
गोविन्द दोऊ शिशुन को, मन्त्रद्वय दिये सुनाय॥
लहैं पराशर भट्ट यतिवर को सब उत्तराधिकार॥ स्वामी०

बाल गोविन्द गोविन्द के भाई,
तिनकी पत्नि पुत्र एक जाई,

० ० ०

दिये यतिराज परांकुश नाम,
पुराये यामुन के मनकाम,
बाल ये तीनों मन अभिराम,

दोहा—इन तीनन को निरखि के, यतिवर उर आह्लाद ।
आगे चलि के बाँटिहै भगवत्कृपा प्रसाद॥
सम्प्रदाय सिद्धांत दिव्य, प्रभु-लीला रहस्य उघार॥ स्वामी०

---
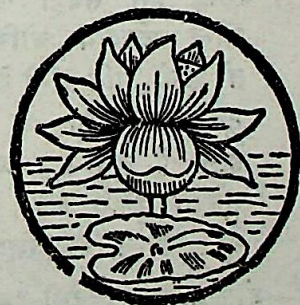
* श्रीवत्स चिह्न मिश्र भी इन्हीं का नाम है। * प्रथम का नाम श्रीपराशर भट्टाचार्य द्वितीय का व्यास एवं श्रीराम देशिक।

धनुर्दास निचुलापुर वासी
पहलवान निज पत्नि उपासी
० ० ०
रह्यो हे माम्बा में आसक्त,
नेत्र वाके नेत्रन में अनुरक्त,
दरश हित लोक लाज सब व्यक्त, .

दोहा—अति अनुरागी हृदय यह, यतिवर मन अनुमानि ।
फिरै अगर जदीश दिशि, भक्त होय अस जानि ।।
लिये, बुलाय, बुझाय प्रेम सों, विनये करुणागार ।। स्वामी०
हे प्रभु ! याके मन को मोड़ो,
अपने चरण कमल में जोड़ो,
० ० ०
दिखा के शोभा अमित अतूल
कृपा कर दो, प्रभु मंगल मूल,
जाय यह नश्वर जग छवि भूल,

दोहा—भई जब सन्ध्या आरती, धनुर्दास बुलवाय ।
मोहन छवि दिखराय प्रभु लिये ताहि अपनाय ।।
आत्म समर्पण कियो धनुर्धर, तन मन धन सब वार ।। स्वामी०
पत्नी संग भक्ति अस लीन्ही,
यतिवर स्वयं प्रशंसा कीन्ही,
० ० ०
भले हो वर्ण चतुर्थ शरीर,
किन्तु है अति पुनीत मतिधीर,
हृदय, जिमि निर्मल गंगा नीर,

कवित्त—विप्रन के संशय पै कौपीन कटवाय लीन्हैं,
ताहि हेतु सबही लड़िबे को तैयार भे ।
लीन्हे मँगवाय चोरि भूषण हेमाम्बा के,
तो दोनों पति पत्नी सेवा धर्म पै बलिहार भे ।
टुकड़े कौपीनन के काढ़ि यतिराज दिये,
इतने पै तुम सब अति दूषित बिचार भे ।
तुमको पुनीत कहैं, अथवा उन दोउन को,
सुनि के वे विप्र शिष्य लज्जित अपार भे ।।

दोहा—बोले यतिवर विहँसी तब, सुनहु सकल दै कान ।
भव तरनि को दीनता, बूड़न को अभिमान ।।
लेहु दैन्य अपनाय, तुम्हारो कुशल करै करतार ।। स्वामी०

महापूर्ण स्वामी एक बारा,
शूद्र भक्त को दाह सम्हारा,

० ० ०

विप्रगण करि के उर अति क्रोध,
महापूरण ते किये विरोध,
पहुँचि गये आचारज हित बोध,

कवित्त—बोले यतिनाथ, नाथ ! कैसी यह बात,
मैंने सुनी कानों कान, कछु समाधान दीजिए।
बोले गुरुदेव, वत्स सुनो याको भेद, प्रभु—
राम ने जटायु को सम्हारयो सो पतीजिये।
विदुर जी को दाह धर्मराज श्रीयुधिष्ठिर किये,
सोई अनुसरयो, आप चिन्ता जनि कीजिये।
श्री मानेरनम्बि भये शूद्र कुल में ऐसे भक्त,
उपमा न और, सम कौन के भनीजिये।।

दोहा—वचन सुनत गुरुदेव के, यतिवन उर अति तोष।
परम धर्म शुभ भागवत, या में रोष न दोष।।
मूरख या को समझैं का, जे तन मन भरे विकार।।स्वामी०

भयो चोल नरपति बड़ पापी,
घोर दुष्ट वैष्णव परितापी,

० ० ०

नाम कुख्यात भयो कृमिकण्ठ,
सिरे परले को दुर्जन लण्ठ,
प्रगट भो मनहुँ अपर दसकण्ठ,

कवित्त—कीन्हो संकल्प कि वैष्णवता उखाड़ि फेंकूँ
देश में न छोड़ूँ याको नाम औ निशान जू।
सब ही स्वीकार करे जोर तलवार के, कि
अहै परमतत्व एक शिव ही प्रधान जू।
जो भी प्रतिवाद करै, ऊँच नीच नारी नर,
विष्णु को बखानै, वाकै छोड़ूँ नहीं प्रान जू।
काहू कहि दीनो, निज विजय यदि चाहो तो,
मँगावो यतिराज रामानुज मतिमान जू।।

दोहा—सुनि के झट कृमिकण्ठ ने पठये भट बलवान।
रामानुज को पकड़ि के सन्मुख राखो आन।।
भेद पाय कूरेश, छिपा गुरु स्वयं भये तैयार।। स्वामी०

महापूर्णं जू संग मैं धाये,
चोलराज के सन्मुख आये,

० ० ०
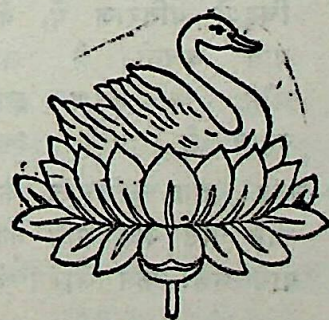
नीच ने राख्यो निज प्रस्ताव,
त्यागि के. वैष्णवता को भाव,
तत्व शिव, परम तत्व कथि गाव,

कवित्त—बोले श्री कूरेश, एक तत्व के अनेक नाम,
ब्रह्मा – विष्णु – शिव, तीन प्रमुख स्वरूप है।
जाको जैसो भाव, वाको वही है प्रधान इष्ट,
आप हेतु शिव, मोकूँ विष्णु ही अनूप है।
बोल्यो कृमिकण्ठ, कहो सबते महान शिव,
सन्त बोले, शिव हू ते भारो द्रोण रूप हैं।
सुनि के व्यंग्य बैन, अति ही रिसाइ उठ्यो
गर्जि के जल्लादन ते, बोल्यो चोल भूप हैं॥

दोहा—यथा शीघ्र या ढीठ की, आँखे लेहु निकार।
सुनि कूरेश निज करन ते, काढ़ि नेत्र दिये डार॥
महापूर्णं स्वामी हू के दोउ नैना भये शिकार॥ स्वामी०

ये दोउ हीन भये नैनन ते,
बचि गये यतिवर उत्पीड़न ते

० ० ०

तजे मग महापूर्णं निज देह,
लौटि कूरेश स्वामी निज गेह,
निबाहत हरि गुरू ते प्रिय नेह,

कवित्त—एक बार रंगनाथ मन्दिर में प्रविशत,
रोकि दिये प्रमुख पुजारिन्ह ने द्वार पै।
रोकिबे को हेतु जब पूछे तो बताये सब,
डर चोल राज कृमिकण्ठ अत्याचार पै।
चिढ्यो यतिराज पै, वैष्णवता को मुख्य जानि,
याते बचनो है यतिराज परिवार पै।
लौटि के कूरेश झट आये वृषभाचल पै,
ध्यान है लगाये, गुरू कृपापूर्ण प्यार पै॥

दोहा—उदर रोग कृमिकण्ड के, कण्ठमाल को रोग।
कीड़े पड़ि पड़ि सड़ि गयो भोगत दारुण भोग॥
पाये सद्यः फल जीवन में, किये जे अत्यचार॥ स्वामी०

क्रमशः—

समाचार-स्तम्भ

श्रीझालरिया मठ बड़ा स्थान, डीडवाना (राज०) का श्रीब्रह्मोत्सव

श्रीजानकी वल्लभ जी महाराज का श्रीब्रह्मोत्सव फाल्गुन शुक्ला ७ रविवार सम्वत् २०५२ से प्रारम्भ होकर फाल्गुन शुक्ला १२ शनिवार को पूर्ण होगा। इसमें प्रतिदिन भगवान् की नित्य नवीन शृंगार से नाना वाहनों पर प्रातः सांय सवारियां निकलती हैं। मध्याह्न में प्रतिदिन यज्ञ, वेदपरायण आदि होंगे। बसन्त फाग की सवारी फाल्गुन शुक्ला १० बुधवार को विशेष समारोह के साथ नगर में निकलेगी।

इन सात दिनों में मंगलागिरि, सूर्यवाहन, हनुमानवाहन, गरुडवाहन, शेषवाहन, अश्ववाहन, गजवाहन, कल्पवृक्ष, पुष्पविमान, पर सवारी प्रातः सायं निकलेंगी। भक्तों को दर्शन देने के लिये भगवान की कृपा बरसेगी। इस अवसर पर झालरिया मठाधीश्वर ज० गु० अनन्तश्री स्वामी श्रीघनश्यामाचार्य जी महाराज के दर्शनों का लाभ प्राप्त होगा।

विनीत—श्रीझालरिया मठ, डीडवाना (राज०)

आनन्द भवन, डीडवाना में श्रीमद् भागवत कथा ज्ञानयज्ञ समारोह

डीडवाना, जि० नागौर (राज०) भगवान श्रीजानकीनाथ की कृपा के आश्रित वै० बा० अनन्तश्री विभूषित प्रातः स्मरणीय ज० गु० स्वामी श्रीकेशवाचार्य जी महाराज की सत्प्रेरणा से डीडवाना नगर में श्रीमद्भागवत कथा ज्ञान यज्ञ का आयोजन दिनांक २० मार्च से २८ मार्च १९९६ तक 'आनन्द भवन' में समारोह पूर्वक सम्पन्न होगा।

व्यास पीठ को सुशोभित करेंगे अनन्तश्री समलंकृत श्रीनागोरिया पीठाधिपति, भारत विख्यात भागवतमर्मज्ञ, रससिद्ध वक्ता, सन्त प्रवर जगद्गुरु स्वामी श्री श्रीनिवासाचार्यजी महाराज। उन्होंने स्थानीय भक्तों के आग्रह पर यह आशीर्वादात्मक स्वीकृति दी है।

आप सबसे अनुरोध है कि इस सार्वजनिक आयोजन में पधार कर हम सबको आपका मार्गदर्शन मिल सकेगा और कथामृत का लाभ आपको मिल सकेगा।

विनीत—श्रीमद्भागवत कथा ज्ञानयज्ञ समिति एवं श्रद्धालु भक्तगण
श्रीआदिसिद्ध स्थान नागोरियामठ डीडवाना (राज०)

श्रीरामनवमी शोभायात्रा

श्रीवेङ्कटेश मन्दिर, बिलासपुर (म० प्र०) में श्रीराम नवमी के शुभ अवसर पर श्रीराम नवमी शोभा यात्रा का भव्य आयोजन दि० २८ मार्च १९९६ को मध्याह्नोत्तर ४-३० बजे श्रीवेङ्कटेश मन्दिर से प्रारम्भ होकर नगर भ्रमण के पश्चात् यात्रा का समापन भी मन्दिर में ही होगा। भक्तों से अनुरोध है कि इस आयोजन में सम्मिलित हो आनन्द मनायें।

निवेदक—
श्रीवेङ्कटेश संस्कृत प्रचार समिति
बिलासपुर [म० प्र०]

श्रीगंगातट पर जिला बदायूँ (उ० प्र०) में उत्तराधिकारी का चयन

श्रीत्रिदण्डिदेव सेवाश्रम श्रीराधाकृष्ण मन्दिर श्रीगंगा घाट, कछला जिला पदायूँ (उ० प्र०) के संस्थापक श्रीमत्स्वामी उपेन्द्राचार्य जी महाराज ने आश्रम के वार्षिकोत्सव के अवसर पर श्रीमद् भागवत सप्ताह ज्ञानयज्ञ का आयोजन किया। व्यासपीठ पर ज० गु० रा० श्रीस्वामी रामचन्द्राचार्यजी महाराज ने विराज कर कथामृत पान कराया। यह कार्य २६ जनवरी '९६ से २ फरवरी '९६ तक सम्पन्न हुआ।

इस अवसर पर ही अपने इस आश्रम के वर्तमान कालिक एवं भविष्य की स्थाई सुव्यवस्था हेतु अपने ३५, ३६ वर्षों से साथी तथा आश्रम निर्माण में पूर्ण सहयोगी, आश्रम के विकास में समर्पित, अपने विश्वसनीय गुरु भाई श्रीस्वामी संकर्षणाचार्य जी महाराज का चयन किया। इस समय जगद्-गुरु रामानुजाचार्य जी वेहटा जंगल जि० शाहजहांपुर एवं अष्टभू वैकुण्ठ आश्रम छोटी बस्ती पुष्कर (राज०), श्रीत्रिदण्डि स्वामी रामनारायणाचार्य जी महाराज तथा स्थानीय और आश्रम के सभी साधु सन्त सद्‌गृहस्थ उपस्थित थे। सभी ने अनुमोदन किया और श्रीस्वामी उपेन्द्राचार्य जी को साधुवाद दिया। दूसरे दिन बदायूँ में रजिस्ट्री आफिस में सारी औपचारिकता पूरी हो गई। श्रीसंकर्षणाचार्य स्वामी जी ने कहा कि मैं विश्वास दिला कर कहता हूं। कि श्रीसम्प्रदायानुसार आश्रम की एवं आश्रमस्थ भगवान श्रीराधाकृष्ण की सेवा पूजा और मर्यादा की सुरक्षा का पूर्ण प्रयास करता रहूंगा।

श्रीस्वामी उपेन्द्राचार्य जी

स्वामी श्रीसङ्कर्षणाचार्य (चयनित)
स्वामी श्रीनिवासाचार्य अधिकारी
श्रीत्रिदण्डिदेव सेवाश्रम कछला, बदायूँ

श्रीमन्दिर जानजीवल्लभ ट्रस्ट [रजि०] का श्रीब्रह्मोत्सव सम्पन्न

नक्कासा नं० २ नई सड़क, लश्कर ग्वालियर (म० प्र०) स्थित श्रीमन्दिर जानकीवल्लभ ट्रस्ट (रजि०) की प्रतिष्ठा आज से लगभग १५० वर्ष पूर्व हुई थी। मन्दिर में श्रीवेङ्कटेश जी एवं श्रीपद्मावती जी के विग्रहों की प्राणप्रतिष्ठा फरवरी १९८९ में हुयी थी यह तृदिवसीय ब्रह्मोत्सव तब से लगातार होता आ रहा है इस वर्ष दिनांक ३०-१-९६ से दिनांक १-२-९६ तक मन्दिर परिसर में में हुआ। आदिसिद्ध नागोरिया मठ के अधिष्ठाता अनन्तश्री विभूषित श्रीस्वामी श्रीनिवासाचार्य जी महाराज स्वयं पधारे और अपने प्रवचनों से यहाँ की जनता को प्रभावित किया। दिनांक १-२-९६ को उत्सव का समागत विद्वानों के सम्मान बहुमान के साथ हुआ।

श्रीगंगादास जी कुइया, श्रीमदनमोहन नागोरी, तथा श्रीलक्ष्मणकुमार माहेश्वरी (मन्त्री) का उल्लेखनीय सहयोग रहा।

प्रेषक—लक्ष्मणकुमार माहेश्वरी
श्रीरंगनिवास, ग्वालियर (म०प्र०)

वृन्दावन में अष्टोत्तरशत १०८ श्रीमद्भागवत कथा सप्ताह ज्ञानयज्ञ एवं श्रीसुदर्शन महायज्ञ

श्रीधाम वृन्दावन में भगवान् की निर्हेतुक कृपा से १०८ श्रीमद्भागवत कथा सप्ताह ज्ञानयज्ञ एवं श्रीसुदर्शन महायज्ञ का आयोजन वैशाख वदी २ तदनुसार दिनांक ५ अप्रैल ९६ शुक्रवार से दिनांक १२-४-९६ शुक्रवार तक श्रीवेङ्कटेश भवन प्रांगण (रंगमन्दिर की कोठी) में होगा।

व्यासपीठ पर आदिसिद्ध नागोरिया पीठाधीश अनन्तश्री विभूषित श्रीमज्जगद्गुरु श्रीस्वामी श्रीनिवासाचार्य जी महाराज विराजमान होकर अपने मुखारविन्द से कथामृत का पान करायेंगे।

श्रीसुदर्शन महायज्ञ का समायोजित कार्य श्रीवेङ्कटाचार्य जी महाराज अपने सुनियोजित आचार्यों से सम्पादित करेंगे।

कार्यक्रम—श्रीमद्भागवत पाठ १०८ विद्वानों से—

प्रतिदिन प्रातः ७ बजे से ९ बजे तक मध्याह्न १२ बजे से २-३० बजे तक

कथा— प्रातः ९-१५ बजे से ११-४५ बजे तक मध्याह्न ३ बजे से ६ बजे तक

सुदर्शन यज्ञ प्रातः ७ बजे से ९ बजे तक मध्याह्न ६ बजे से ९ बजे तक

इस महान् कार्यक्रम की आयोजिका श्रीमनोरमा सोमानी, बम्बई (धर्मपत्नी वैकुण्ठवासी डा० जुगलकिशोर सोमानी) हैं। आप इस प्रकार के आयोजन तिरुपति, श्रीरंगम्, हरिद्वार, अयोध्या शुकताल आदि पुण्य क्षेत्रोंमें करा चुकी हैं। आप भी इस शुभ कार्यमें सम्मिलित हो आनन्द लाभ करें।

विनीत—केशवदेव शास्त्री
सम्पादक अनन्त-सन्देश

बड़ा खटला वृन्दावन का माघ मेला प्रयाग में अन्नक्षेत्र सम्पन्न

प्रत्येक वर्ष की भाँति इस वर्ष भी माघ मकर के शुभ योग पर तीर्थराज प्रयाग में श्रीरामानुज नगर में जगदाचार्य, सत्संप्रदायाचार्य श्रीस्वामी हयग्रीवाचार्य जी महाराज की पुण्य स्मृति में उनके द्वारा स्थापित बड़ा खटला वृन्दावन आदि अनेक स्थानों की ओर से परमपूज्य श्रीस्वामी जयकृष्णाचार्य जी महाराज की अध्यक्षता में कथा, प्रवचन, कथा, संकीर्तन, अन्नक्षेत्र (तदीयाराधन) पौष पूर्णिमा दिनांक ५-१-९६ से माघ पूर्णिमा दिनांक ४-२-९६ तक अनवरत रूप से चला। जिसमें अनेकानेक प्रान्तों से समागत सन्त महात्मा अभ्यागत साधुओं की सेवा हुई। बाड़े में श्रीमाधोदास, श्रीरघुवरदास, श्रीरामबाबू, श्रीप्रमोद जी, फरीदाबाद से पधारे श्रीतिवारी जी आदि की सेवा उत्साह पूर्वक थी।

बाड़ा विशाल था, पकड़ी विहार से पधारे महन्त श्रीस्वामी रघुवंशाचार्य जी द्वारा सेवा में भाग लेते देखा गया। श्रीस्वामी जी महाराज का साधु सेवा में अधिक भाव रहता है। बाड़े का संचालन उत्तराधिकारी स्वामी रामेश्वराचार्य जी ने किया।

मन्दिर श्रीमुरलीमनोहर जी जयपुर में अनन्तश्री श्रीस्वामी नारायणाचार्य जी की पुण्यतिथि, श्रीवैकुण्ठ एकादशी, धनुर्मास महोत्सव आदि उत्सव मनाये गये। यह मन्दिर जयपुर में रामानुजमार्ग गंगापोल दरवाजा बाहर जयपुर—३०२००२ में स्थित है। ★

श्रीहरिदेव मन्दिर का वार्षिकोत्सव

वृन्दावन, श्रीहरिदेव मन्दिर का वार्षिकोत्सव चैत्र कृष्ण १ बुधवार तदनुसार दि० ६-३-९६ से चैत्र कृष्ण ३ शुक्रवार दिनांक ८-३-९६ तक सुसंपन्न होने जा रहा है तृदिवसीय इस महोत्सव में भगवान् का तिरुमञ्जन श्रीगीता, श्रीविष्णुसहस्रनाम, स्तोत्र पाठ आदि भगवत्कैङ्कर्य होंगे। अन्तिम दिन भगवान् की सवारी शोभायात्रा के रूप में नगर भ्रमण को पधारेगी। दिनाँक ८-३-९६ को तदीयाराधन श्रीवैष्णव सेवा भगवत्प्रसाद से होगी।

उक्त कार्य श्रीजगद्गुरु रामानुजाचार्य श्रीस्वामी देवनारायणाचार्य जी महाराज के तत्वावधान सम्पन्न होगा।

५० वाँ श्रीलक्ष्मीनारायण महायज्ञ, मनासा में सम्पन्न

मनासा, (म० प्र०) में ५० वाँ श्रीलक्ष्मीनारायण महायज्ञ का विशाल आयोजन दिनांक २०-३-९६ से २५-३-९६ तक माहेश्वरी धर्मशाला के प्रांगण मनासा में ज० गु० रा० श्रीस्वामी श्रीकान्ताचार्य जी (उज्जैन) यज्ञप्रणेता के तत्वावधान में सुसम्पन्न हुआ। स्थानीय जनता और श्रीहरिश्चन्द्र देवपुरा (वकील) रामचन्द्र मालपानी, राधेश्याम मूंगड़ राजेन्द्रकुमार लढ़ा, राधेश्याम मूदड़ा, प्रीतमकुमार बांगा का अच्छा सहयोग था।

पुरुषोत्तम मास के समय श्रीलक्ष्मीनारायण महायज्ञ तथा श्रीमद्भागवत ज्ञानयज्ञ का विशाल आयोजन

उक्त विशाल एवं भव्य आयोजन का यज्ञप्रणेता—ज० गु० रा० श्रीस्वामी श्रीकान्ताचार्य महाराज (उज्जैन) के तत्वावधान में अधिक मास में श्रीजगन्नाथपुरी उडीसा में श्रीत्रिमाली मठ पुरी में दिनांक ५-७-९६ से १५-७-९६ तक श्रीलक्ष्मीनारायण महायज्ञ होगा।

और इसी समय श्रीमद्भागवत सप्ताह कथा का आयोजन भी होगा। व्यासपीठ पर श्रीस्वामी कृष्णाचार्य जी महाराज ऋषीकेश विराजमान होकर कथामृत पान करायेंगे। यह स्वर्ण अवसर है। श्रीजगन्नाथ देव जी का दर्शन, समुद्र स्नान, यज्ञ भगवान की आराधना, एवं भगवान श्रीकृष्ण की लीलाओं का श्रवण, कलेवर परिवर्तन नव कलेवर का दर्शन सौभाग्य भी एक साथ होंगे।

इस आयोजन के संयोजक श्रीरामवल्लभजी गुप्ता, इन्दौर अध्यक्ष—श्रीसत्यनारायण जी न्याती धामनोद, उपाध्यक्ष—श्रीधनराज कोठारी आलीराजपुर, रामनारायण अग्रवाल, रामेश्वरलाल अमावा, रामचन्द्र मण्डोवरा इन्दौर इस महान् कार्य की सुव्यवस्थापिका श्रीमती सवितादेवी (धर्म पत्नी—स्वामी अनिरुद्धाचार्य जी) तिरुपति हैं। यह सुमनोज्ञ यज्ञ होगा।

उक्त आयोजन का पता—
श्रीत्रिमाली मठ, जगन्नाथपुरी उडीसा

---

* श्याम की होली *

खेलिये फाग निसंक ह्वै आज मयंकमुखी कहै भाग हमारो।
लेहु गुलाल दुहूं कर में पिचकारिन रंग हिये महं मारो॥
भावै तुमै सो करो मोहि लाल पै पायं परौं जिन घूंघट टारो।
वीर की सौं हम देखि हैं कैसे अबीर तो आंखें बचाय कै डारो॥ 'पद्माकर'

पदान्तरार्थनिश्चयेन वा प्रकृत्यर्थनिश्चयेन वा शब्दस्य सिद्धवस्त्वभिधानशक्तिनिश्चयः— ज्ञातकार्याभिधायिपदसमुदायस्य तदंशविशेषनिश्चयरूपत्वात् तस्य ।

न च सर्पाद्भीतस्य 'नायं सर्पो रज्जुरेषा' इतिशब्दश्रवणसमनन्तरं भयनिवृत्तिदर्श-

---

पुत्रजन्मलक्षणसिद्धार्थबोधकत्वमावश्यकम् ।

ननु व्युत्पन्नेतरपदार्थस्य=व्युत्पन्नः=शक्त्या ज्ञात इतरपदस्यार्थो येन पुरुषेण तस्य पदान्तरार्थनिश्चयेन=सिद्धपदार्थान्तरविषयकजायमाननिश्चयात्मकबाधात् शब्दस्य सिद्धवस्त्वभिधानशक्तिनिश्चयः सम्भवति यथा 'कः कूजति ।' इतिप्रश्नानन्तरम् 'पिकः कूजति' इत्युक्ते श्रोतु कूजतिपदार्थव्युत्पत्त्या सिद्धेपि कूजनकर्तृभूतपक्षिविशेषे पिकपदस्य शक्तिग्रहो भवति—एतादृशकूजनकर्ता पिक इत्युच्यते इति तथा व्युत्पन्नाविभक्त्यर्थस्य पुंसः प्रकृत्यर्थनिश्चयेन=प्रकृत्यर्थविषयकबोधोत्पत्तिदर्शनाम् शब्दस्य सिद्धवस्त्वभिधानशक्तिनिश्चयः सम्भवति यथा 'काष्ठैरोदनं पच' इतिश्रुते विभक्त्यर्थव्युत्पत्त्या प्रकृत्यर्थस्य पाकपदार्थस्य काष्ठपदार्थस्य वा निश्चयेन=तादृशसिद्धपदार्थविषयकजायमाननिश्चयात्मकबोधाद् धात्वर्थपाक सम्पादकदारुपदार्थे काष्ठशब्दस्य किं वा सिद्धे वर्तमाने पादपदार्थे पचधातोः शक्तिग्रहो भवतीति न सिद्धपदार्थे शब्दस्य सर्वथा शक्ति ग्रहासंभव इत्याशङ्क्याह—नापीति । एवमपि न सिद्धे शक्तिग्रहः संभवतीत्यर्थः । हेतुमाह—ज्ञातकार्येति, ज्ञातः कार्याभिधायी 'घटमानय' इत्यादिपद-

---

अर्थ का बोधक मानना आवश्यक है । कहो कि जिस पुरुष ने शक्ति द्वारा अन्य पद का अर्थ जान लिया है, उसके पदार्थान्तर निश्चय द्वारा=अर्थात् सिद्ध, अन्य पदार्थ विषयक होने वाले निश्चयात्मक बोध से, शब्द की सिद्ध वस्तु को कहने की शक्ति का निश्चय होता है—जैसे–'कः कूजति'=कौन कूज रहा है ? 'पिकः कूजति'=कोयल कूज रही है । कहने पर श्रोता के लिए 'कूजति' पदार्थ की व्युत्पत्ति द्वारा कूजन करने वाले पक्षिविशेष का ज्ञान सिद्ध होने पर भी 'पिक' पद का शक्तिग्रह होता है कि इस प्रकार कूजन करने वाला 'पिक' कहा जाता है । वैसे ही विभक्ति के अर्थ को जानने वाले पुरुष के लिए प्रकृत्यर्थ विषयक बोध की उत्पत्ति के दर्शन से शब्द की सिद्धि वस्तु को कहने की शक्ति का निश्चय होता है 'काष्ठैरोदनं पच' लकड़ी से चावल पकाओ' सुनने पर विभक्त्यर्थ के ज्ञान द्वारा प्रकृत्यर्थ पाक पदार्थ अथवा काष्ठ पदार्थ का निश्चय होने से धात्वर्थ पाक के सम्पादक दारु पदार्थ में काष्ठ शब्दका, किं वा सिद्ध=वर्तमान पाक पदार्थ में पच् धातुका, शक्तिग्रह होता है, अतः सिद्ध पदार्थ में शब्द का सर्वथा शक्तिग्रह असम्भव नहीं है– ऐसी आशङ्का करके कहते हैं– नापीति । इस प्रकार भी, सिद्ध पदार्थ का शक्ति द्वारा ग्रहण सम्भव नहीं हो सकता है । इत्यर्थः । हेतु बतलाते हैं— ज्ञातकार्येति, (क्योंकि) कार्य को कहने वाले 'घटमानय' पद समुदाय को जिसने जान लिया है, उस ज्ञाती

नेन सर्पाभावबुद्धिहेतुत्वनिश्चयः, अत्रापि निश्चेष्टं निर्विषयचेतनमिदं वस्तु इत्याद्यर्थ-बोधेषु बहुषु भयनिवृत्तिहेतुषु सत्सु विशेषनिश्चयायोगात् । कार्यबुद्धिप्रवृत्तिव्याप्तिबलेन शब्दस्य प्रवर्तकार्थावबोधित्वमवगतमिति सर्वपदानां कार्यपरत्वेन सर्वैः पदैः कार्यस्यैव

समुदायो येन तादृशस्योक्तव्युत्पन्नपुरुषस्य तस्य=पदान्तरार्थनिश्चयस्य प्रकृत्यर्थनिश्चयस्य च तदंश-विशेषनिश्चयरूपत्वात्=कार्याभिधायिपदसमुदायांशविशेषविषयकनिश्चयरूपत्वात् इतिपदार्थः, उक्त-पुरुषेण पिको ग्राह्यः' 'काष्ठं पच' इत्यादिकार्याभिधायिपदसमुदाय. (वाक्यम्) श्रुत एवेति तस्य पुरुषस्य यः पदान्तरार्थनिश्चयः प्रकृत्यर्थनिश्चयश्च स कार्याभिधायिपदसमुदायांशविशेषनिश्चयरूप एव नाम निश्चयेन ज्ञातः पदान्तरार्थः। प्रकृत्यर्थश्च कार्याभिधायिवाक्यार्थांश एवेति तत्र कार्याभिधायिवाक्यार्थांश रूपे एव पदान्तरार्थे प्रकृत्यर्थे च प्रकृते. पदान्तरय च एवेति पदान्तरार्थविभक्त्यर्थयोर्व्युत्पत्तिसाहाय्येन शक्तिग्रहो जायते नैतावता सिद्धमात्रे शक्तिग्रहः सम्भवति, तथा च वेदान्तेषु कार्याभिधायिवाक्यार्थांशनिश्चय एव न सम्भवति येन तदानुकूल्येन वेदा-न्तानां सिद्धब्रह्मबोधकत्वमुपपद्येतकार्याभिधायित्वाभावश्च वेदान्तेषु स्पष्ट एव सिद्धब्रह्मपरत्वस्वीका-रादिति न सिद्धवस्त्वभिधानशक्तिनिश्चयः सम्भवति । वस्तुतस्तु ज्ञानकार्येत्यत्र 'तस्य ज्ञातकार्याभि-धायिपदसमुदायांशविशेष निश्चयरूपत्वात्' इत्येवं वक्तव्यमासीत्, तस्य=उक्तनिश्चयस्य ज्ञातो यः कार्याभिधायिपदसमुदायस्तस्य यः पिकादिलक्षणांशविशेषस्तन्निश्चयरूपत्वादित्यन्वयः ।

पुरुष का पदान्तर के अर्थ का निश्चय और प्रकृति के अर्थ का निश्चय कार्य को कहने वाले पद समु-दायांश विशेष विषयक निश्चय रूप होता है—यह पदार्थ, (तथा) उक्त पुरुष द्वारा 'पिको ग्राह्यः' 'काष्ठं पच' इत्यादि कार्याभिधायी पद समुदाय अर्थात् वाक्य सुना ही गया है, इसलिए उस पुरुष का जो पदार्थान्तर निश्चय और प्रकृत्यर्थ निश्चय है वह, कार्य को कहने वाले पद समुदायांश विशेष निश्चय रूप ही होता है, नाम निश्चय पूर्वक जाना गया पदान्तरार्थ और प्रकृत्यर्थ कार्याभिधायी वाक्यार्थ का अंश ही है, अतः उस कार्याभिधायी वाक्यार्थांश रूप ही पदान्तरार्थ और प्रकृत्यर्थ में, प्रकृति और पदान्तर का, पदान्तरार्थ तथा विभक्त्यर्थ की व्युत्पत्ति की सहायता से शक्तिग्रह होता है, इतने मात्र से ही सिद्ध पदार्थ का शक्तिग्रह सम्भव नहीं होता है, तथा च-वेदान्त (वाक्यों) में कार्याभिधायी वाक्यार्थांश का निश्चय ही नहीं होता है, जिससे कि उसकी अनुकूलता द्वारा वेदान्त (वाक्यों) का सिद्ध ब्रह्म को कह सकना उपपन्न हो सके। वेदान्त वाक्यों का कार्याभिधायी न होना स्पष्ट ही है। अतः उनमें सिद्ध परब्रह्म वस्तु के अभिधान की शक्ति का निश्चय सम्भव नहीं हो सकता है। वस्तुतः ज्ञात कार्येति यहाँ पर उसके ज्ञातकार्य को कहने वाले पद समुदयांश विशेष निश्चय रूप

विशिष्टस्य प्रतिपादनात् कार्यान्वितस्वार्थमात्रे पदशक्तिनिश्चयः।

इष्टसाधनताबुद्धिस्तु कार्यबुद्धिद्वारेण प्रवृत्तिहेतुर्न स्वरूपेण—अतीतानागतवर्तमाने-ष्टोपायबुद्धिषु प्रवृत्त्यनुपलब्धेः। इष्टोपायो हि मत्प्रयत्नादृते न सिध्यति अतो मत्कृतिसाध्य

ननु—रज्जौ सर्पभ्रान्त्या भीतस्य 'नायं सर्पः किन्तु रज्जुः' इतिवाक्यश्रवणेन भयनिवृत्तिर्दृश्यते तादृशभयनिवृत्तिश्चैतद् वाक्यजन्यसर्पाभावविषयकबोधेनैवोपपद्यते इति 'नायं सर्पः' इत्यादिसिद्धार्थ-विषयकबोधजनकत्वनिश्चयो भवतीति सिद्धं सिद्धार्थबोधकत्वमित्याशङ्क्याह—न चेति, सर्पाभावश्च सिद्धपदार्थ एव न तु कार्यरूपः न चात्र कार्यविशिष्टोपीति स्पष्टमेव, इद चोदाहरणमद्वैतवादस्य। परिहारहेतुमाह—अत्रापीति, अत्रापि निश्चेष्टं निर्विषमिदमित्यादिप्रत्यक्षेणापि भयनिवृत्तिः सम्भव-तीति उक्तवाक्यजन्यज्ञानेनैव भवनिवृत्तिर्जातेति निश्चयो न सम्भवति येनोक्तवाक्यस्य सर्पाभावरूप-सिद्धार्थ बोधकत्वं सिध्येत। प्राभाकरः स्वाभिप्रायमाह-कार्येति, यदा कार्यविषयकज्ञानम् 'कर्तव्यम्' इत्यादि रूपं भवति तदैव प्रवृत्तिर्भवति नान्यथेति व्याप्तिबलेन शब्दस्य प्रवर्तकार्थावबोधित्वम्= प्रवर्तकं यत् कार्यं तद्रूपार्थ बोधकत्वं निश्चितमिति सर्वेषां पदानां कार्यपरत्वेन=कार्यबोधकत्वेन सर्वैः पदैर्विशिष्टस्य=विशेषस्य=आनयनगमनादिरूपतत्तत्कार्यस्यैव प्रतिपादनात् घटादिपदार्थानां च कार्य-

---

होने से ऐसा कहा जाना चाहिए था=उसके अर्थात् उक्त निश्चय के ज्ञात कार्याभिधायी पद समुदाय का जो 'पिक' आदि रूप अंश विशेष है—तन्निश्चय रूप होने से (ऐसा कहा जाना चाहिए था। इत्यन्वयः।

कहो कि—रस्सी में सर्प की भ्रान्ति से डरे हुए व्यक्ति को—यह सुनकर कि—यह सर्प नहीं है, यह तो रस्सी है—भय नहीं रह जाता है-ऐसा देखा जाता है, यह भय निवृत्ति, इस वाक्य से होने वाले सर्प के अभाव विषयक ज्ञान से ही-उपपन्न होती है अतः 'यह सर्प नहीं है' इत्यादि सिद्ध अर्थ वाले वाक्य में सर्पाभाव विषयक बोध जनकता का निश्चय होता है अतः सिद्ध अर्थ की बोधकता सिद्ध होती है—ऐसी आशङ्का करके कहते हैं—न चेति, सर्प का अभाव सिद्ध पदार्थ ही है, कार्यरूप नहीं है, कार्य विशिष्ट भी नहीं है—यह यहाँ स्पष्ट है। रज्जु सर्प का उदाहरण अद्वैतवाद का है। (इसके) परिहार का हेतु कहते हैं—अत्रापीति। यहाँ निश्चेष्ट निर्विष यह है इत्यादि प्रत्यक्ष द्वारा भी भय निवृत्ति सम्भव है अतः उक्त वाक्य से होने वाले ज्ञान द्वारा ही भय की निवृत्ति होती है—यह निश्चय सम्भव नहीं है, जिससे कि उक्त वाक्य का सर्पाभाव रूप सिद्ध अर्थ को कहना सिद्ध हो सके। प्राभाकर अपने अभिप्राय को कहता है—कार्येति, जब कार्य विषय का ज्ञान 'कर्तव्य' अर्थात् करणीय इत्यादि रूप होता है तब ही उसमें प्रवृत्ति होती है, अन्यथा प्रवृत्ति नहीं होती है, इस व्याप्ति के बल

इति बुद्धिर्यावन्न जायते तावन्न प्रवर्तते, अतः कार्यबुद्धिरेव प्रवृत्तिहेतुरिति प्रवर्तकस्यैव शब्दवाच्यतया कार्यस्यैव वेदवेद्यत्वात् परिनिष्पन्नरूपब्रह्मप्राप्तिलक्षणानन्तस्थिरफला-

---

विशेषणत्वात् कार्यान्वितस्वार्थमात्रे=आनयनादिकार्यान्विते एव स्वार्थे=घटादौ घटादिपदशक्ति-निश्चयो भवति न तु सिद्धार्थेऽपि येन वेदान्तवाक्यानां सिद्धब्रह्मबोधकत्वं सिध्येदित्यन्वयः।

ननु यदि यदेव प्रवर्तकं तदेव शब्दार्थस्तदेष्टसाधनतया ज्ञानेन प्रवृत्तिर्भवतीतीष्टसाधनत्वमेव शब्दार्थः स्यान्न तु कार्यमित्याशङ्क्याह—इष्टसाधनतेति, इष्टसाधनताबुद्धिः स्वरूपेण=स्वयं न प्रवर्तिका भवति किं तु कार्यबुद्धिद्वारेण नामेष्टसाधनताबुद्ध्या कार्यत्वबुद्धिर्भवति तयैव कार्यत्वबुद्ध्या प्रवृत्तिर्भवतीति प्रवर्तकं कार्यमेव शब्दार्थः। इष्टसाधनताबुद्धेः प्रवर्तकत्वव्यभिचारमाह—अतीतेति, अतीतानागतवर्तमानविषयासु इष्टोपायबुद्धिषु=इष्टसाधनताबुद्धिषु, सतीष्वपि कृतिसाध्यताज्ञानाभावात् प्रवृत्तिर्नोपलभ्यते इति नेष्टसाधनताबुद्धिः प्रवर्तिका भवति। प्रवृत्तिकारणमाह—इष्ट इति, मत्प्रयत्नादृते=मत्कृतिं विना न सेत्स्यतीति 'अयमत्कृतिसाध्यः' इतिकृति साध्यत्वज्ञानं विना प्रवृत्तिर्न

से, शब्द का, प्रवर्तक कार्यरूप अर्थ बोधकत्व, निश्चित होता है, सब पदों के कार्यबोधक होने से, सब पदों के द्वारा आनयन गमनादि रूप तत् तत् कार्य के प्रतिपादन से और घट आदि पदार्थों के कार्यरूप होने से आनयनादि कार्यान्वित स्वार्थ=घटादि में घट आदि पद की शक्ति का निश्चय होता है, सिद्ध अर्थ में शक्ति का निश्चय नहीं होता है, यदि सिद्ध अर्थ में शक्ति का निश्चय होता है तब वेदान्त वाक्यों का सिद्ध ब्रह्म बोधक होना सिद्ध होता। इत्यन्वयः।

कहो कि यदि जो प्रवर्तक है वही शब्दार्थ है, तब इष्ट साधनता का ज्ञान होने पर प्रवृत्ति होती है, इस कारण इष्ट साधनत्व ही शब्दार्थ होगा, कार्य, शब्दार्थ नहीं होगा, ऐसी आशङ्का करके कहते हैं—इष्ट साधनतेति, इष्ट साधनता ज्ञान स्वरूपतः=स्वयं प्रवर्तिका नहीं होती है किन्तु कार्य बुद्धि के द्वारा ही प्रवर्तन करती है। इष्ट साधनता बुद्धि से कार्यत्व बुद्धि होती है और कार्यत्व बुद्धि से प्रवृत्ति होती हैं, अतः प्रवर्तक कार्य ही शब्दार्थ होता है। इष्ट साधनता बुद्धि जहाँ प्रवर्तक नहीं होती है वहाँ प्राप्त होने वाले व्यभिचार (दोष) को कहते हैं। अतीतेति–अतीत अनागत और वर्तमान, विषय वाली इष्ट साधनता बुद्धियों के होने पर भी कृति साध्यता के ज्ञान के अभाव में प्रवृत्ति नहीं होती है, अतः सिद्ध होता है कि इष्ट साधनता बुद्धि प्रवृतिका नहीं होती है। प्रवृत्ति का कारण बतलाते हैं—इष्ट इति, मेरे द्वारा क्रिया बिना किये (यह कार्य) सिद्ध नहीं होगा, अतः यह मेरी क्रिया से साध्य (=मत्कृति साध्य) है, इस प्रकार के कृति साध्य होने के ज्ञान के बिना प्रवृत्ति नहीं होती है। कृति से होने वाले को ही कार्य किया जाता है, तथा च कार्यत्व बुद्धि से ही प्रवृत्ति होती है, यह

ऽप्रतिपत्तेः "अक्षय्यं ह वै चातुर्मास्ययाजिनः सुकृतं भवति" इत्यादिभिः कर्मणामेव स्थिरफलत्वप्रतिपादनाच्च कर्मफलाऽल्पाऽस्थिरत्व-ब्रह्मज्ञानफलाऽनन्तस्थिरत्वज्ञानहेतुको ब्रह्मविचारारम्भो न युक्त इति ।

भवति कृतिसाध्यमेव च कार्यमित्युच्यते तथा च कार्यत्वबुद्ध्यैव प्रवृत्तिर्भवतीति सिद्धम्, प्रवर्तक एव शब्द वाच्यः-प्रवृत्ति विना शब्दशक्तिग्रहासंभवात्, प्रवर्तकं च कार्यमेवेति कार्ये कार्यान्विते एव च शब्दशक्तिग्रहात् कार्यस्यैव वेदप्रतिपाद्यत्वं सिद्धं न तु सिद्धब्रह्मणोपि, तथा च परिनिष्पन्नरूपं सिद्धभूतं यद् ब्रह्म वेदान्तेन तद्बोधनासंभवात् तादृशब्रह्मप्राप्तिलक्षणं यदनन्तं स्थिरं च फलं तस्यापि अप्रतिपत्तेः= वेदान्तेन बोधनं न संभवति-ब्रह्मबोधनासंभवादिति वेदान्तविचारो नारम्भणीयः-वेदान्तप्रतिपाद्य-ब्रह्मणो बोधनासंभवात् । किं च "अक्षय्यं ह वै चातुर्मास्ययाजिनः सुकृतं भवति" "पिबाम सोमममृता अभूम" इत्यादि वेदवाक्यैश्चातुर्मास्यादियागादिकर्मणामपि स्थिरफलप्रदत्वं बोध्यते ब्रह्मज्ञानापेक्षया कर्मणां च सुशकत्वादपि हेतोः कर्मफलेऽल्पास्थिरत्वज्ञानहेतुको ब्रह्मज्ञानफलेऽनन्तस्थिरत्वज्ञानहेतुकश्च ब्रह्मविचारारम्भो न युक्त इति न ब्रह्मविचारः कर्तव्य इत्यन्वयः । तदुक्तम् 'न ज्ञेयं पूर्वभागोक्तकर्मभिः सर्वलाभतः' इति । विषयस्य चास्य गुरुमुखादध्ययनं विना विशेषरूपेण वैशद्यं न संभवतीति विस्तर-भीत्योपरम्यते । इदमेव प्रभाकरमतम् अन्विताभिधानवाद इत्युच्यते-अन्वितानाम्=कार्यान्वितानां पदार्थानामभिधानम्=उपस्थितिरिति संक्षेपः ।

सिद्ध है । प्रवर्तक ही शब्द का वाच्य होताहै अर्थात् अर्थ होता है, क्योंकि बिना प्रवृत्तिके शब्दकी शक्ति का ग्रहण ही सम्भव नहीं है । प्रवर्तक कार्य ही होता है अतः कार्य और कार्य से अन्वित में ही शब्द शक्ति का ग्रह होने से, कार्य की ही वेद-प्रतिपाद्यता सिद्ध होती है, सिद्ध ब्रह्म वेद का प्रतिपाद्य है यह सिद्ध नहीं होता है । इस तरह की स्थिति होने से, परिनिष्पन्न सिद्ध जो ब्रह्म है, उसका वेदान्त (वाक्यों) द्वारा ज्ञान असंभव ही है । तादृश ब्रह्म की प्राप्ति रूप जो अनन्त, स्थिर फल है उसका भी बोध वेदान्त (वाक्यों) से संभव नहीं है । अतः वेदान्त विचार आरम्भ नहीं करना चाहिए । किं च 'चातुर्मास्य (यज्ञ) करने वाले का सुकृत (पुण्य) अक्षय होता है', 'सोम पान करें और अमर हो जावें' इत्यादि वेद वचनों से चातुर्मास्य आदि यज्ञ कर्मों का भी स्थिर फल देना ज्ञात होता है । ब्रह्मज्ञान की अपेक्षा कर्मों के सुशक्य होने के कारण से कर्मफल में अल्पता और अस्थिरता का ज्ञान कराने वाला तथा ब्रह्मज्ञान रूपी फल में अनन्तता और स्थिरता के ज्ञान का कारणभूत ब्रह्म विचार आरम्भणीय नहीं है, अतः ब्रह्म विचार नहीं किया जाना चाहिए । इत्यन्वयः । कहा भी है-पूर्वभाग में कहे गये कर्मों द्वारा (ब्रह्म) ज्ञेय नहीं है इत्यादि यह विषय गुरु मुख से अध्ययन किये बिना, विशेष स्पष्ट होना

अत्राभिधीयते—निखिललोकविदितशब्दार्थसम्बन्धावधारणप्रकारमपनुद्य सर्वशब्दानामलौकिकैकार्थावबोधित्वावधारणं प्रामाणिका न बहु मन्यन्ते । एवं किल बालाः शब्दार्थसम्बन्धमवधारयन्ति—मातापितृप्रभृतिभिः अम्बातातमातुलादीन् शशिपशुनरमृगपक्षिसर्पादींश्च 'एनमवेहि' 'इमं चावधारय' इत्यभिप्रायेणाऽङ्गुल्या—निर्दिश्य तैस्तैः शब्दैस्तेषु

प्रतिपादितपूर्वपक्षं परिहरति–अत्रेत्यादिना, निखिललोकविदितो यः 'शक्तिग्रहं व्याकरणोपमानकोशाप्तवाक्याद्व्यवहारतश्च" इत्याद्युक्तः शब्दार्थयोःसंबन्धावधारणस्य=शक्तिग्रहस्य प्रकारस्तमपनुद्य=परित्यज्य सर्वशब्दानामलौकिको यः कार्यरूपोर्थस्तन्मात्रावबोधित्वावधारणं प्रामाणिकाः=भाट्टादयो विद्वांसो न स्वकुर्वन्ति, कार्यबोधकपदैः कार्यार्थस्येव सिद्धबोधकपदैः सिद्धार्थस्यापि बोधनसम्भवात् सर्वलोकप्रसिद्धत्वाच्च, तत्र पूर्वपक्षोक्तव्यवहारमूलकशक्तिग्रहस्थले 'घटमानय घटं नय, पटमानय पटं नय' इत्यादिवाक्यजन्यज्ञानमूलकव्यवहारेण पदानामावापोद्वापाभ्यां घटादिपदानां शुद्धघटादिस्वार्थे शक्तिग्रहस्य पर्यवसानं भवतीति तादृशशक्तिज्ञानेन सिद्धार्थविषयकबोध उपपद्यते । आप्तवाक्येन शक्तिग्रहं स्वयमुदाहरति–एवमिति, पितृप्रभृतिभिः 'एनामम्बामवेहि इमं मातुलमवधारय' 'अयं चन्द्रः पश्य' इत्यभिप्रायेणाऽम्बादीन् अङ्गुल्या निर्दिश्य तैस्तै=अम्बादिशब्दैस्तेषु तेष्वम्बादि-

---

असंभव है, अतः विस्तार के भय से इतना ही विवेचन पर्याप्त है। यही प्रभाकर मत अन्विताभिधानवाद कहा जाता है। इस मत में अन्वित=अर्थात् कार्य से अन्वित हुए पदार्थों का अविधान (=उपस्थिति) होती है। इति संक्षेपः ।

प्रतिपादित पूर्वपक्ष का परिहार करते हैं—अत्रेति, समस्त लोक विज्ञात जो शक्तिग्रह का प्रकार है कि–व्याकरण, उपमान, कोश, आप्तवचन वाक्यशेष, निवृत्ति, अथवा सिद्ध पद के सान्निध्य से शक्तिग्रह होता है, इसका परित्याग करके सभी शब्दों का जो अलौकिक कार्यरूप अर्थ है तन्मात्र परिज्ञान के निश्चय को भाट्ट विद्वान् स्वीकार नहीं करते हैं, क्योंकि कार्यबोधक पदों के द्वारा कार्य अर्थ के समान सिद्ध बोधक पदों के द्वारा सिद्ध अर्थ का भी ज्ञान सम्भव होता है और यह सर्वलोक प्रसिद्ध है। पूर्वपक्ष द्वारा कहे गये व्यवहार मूलक शक्तिग्रह के स्थल में, 'घड़ा लाओ घड़ा ले जाओ', वस्त्र लाओ, वस्त्र ले जाओ' इत्यादि वाक्यों से उत्पन्न ज्ञान मूलक व्यवहार द्वारा पदों के आवाप उद्वाप से घट (=घड़ा) आदि पदों का शुद्ध घटादि रूप अर्थ में शक्तिग्रह पर्यवसन्न होता है। तादृश शक्तिमान से सिद्ध–अर्थ विषयक ज्ञान उपपन्न होता है। आप्तवचन द्वारा शक्तिग्रह का स्वयं उदाहरण देते हैं–एवमिति, पिता आदि द्वारा 'इसे माता जानो' 'इन्हें मामा जानो' 'यह चन्दा है' इसे देखो'—इस अभिप्राय से माता आदि का अङ्गुलि निर्देश करके अम्बादि शब्दों से अम्बा आदि पदार्थों

तेष्वर्थेषु बहुशः शिक्षिताः शनैः शनैस्तैस्तैरेव शब्दैस्तेषु तेष्वर्थेषु स्वात्मनां बुद्धयुत्पत्तिं दृष्ट्वा शब्दार्थयोः सम्बन्धान्तरादर्शनात् संकेतयितृपुरुषाज्ञानाच्च तेष्वर्थेषु तेषां शब्दानां प्रयोगो बोधकत्वनिबन्धन इति निश्चिन्वन्ति, पुनश्च व्युत्पन्नेतरशब्देषु 'अस्य शब्दस्यायमर्थः'

पदार्थेषु बहुधा शिक्षिता बालाः शनैः शनैस्तैस्तैरेवाम्बादिशब्दैस्तेषु तेष्वम्बादिपदार्थेषु स्वात्मनाम्=स्वकीयपित्रादीनां बोधोत्पत्तिं दृष्ट्वा शब्दार्थयोर्बोध्यबोधकरूपसम्बन्धं विना सम्बन्धान्तरस्याऽदर्शनात्=ज्ञानाभावात् संकेतयितृपुरुषाज्ञानाच्च तेष्वम्बादिपदार्थेषु तेषामम्बादिशब्दानां यः प्रयोगः क्रियते पित्रादिभिः स बोधकत्वमूलकः=अयं शब्द एतदर्थबोधक इति हेतोरेवेति निश्चिन्वन्ति। यदि मात्रादिशब्दानां संकेतयितृपुरुषस्य ज्ञानं स्यात्तदा 'अनेनायं शब्दोऽत्रार्थे संकेतितः' इतिबुद्ध्या तस्य शब्दस्य तत्र प्रयोगे सत्यपि तदन्यस्मिन् तादृशार्थे प्रयोगो न स्यादिति प्रयोगे बोधकत्वनिबन्धनत्वनिश्चयोपि न स्याद् यथा मदीयसंगीतगुरुणा श्रीमदमृतसेनमहोदयेन तानसेनवंशावतंसेन स्वकीयसितारवाद्ये मणिरामशब्दः संकेतितस्तत्र तादृशसंकेततत्कर्तृपुरुषयोर्ज्ञानात् मया मणिरामशब्दस्तदन्यसितारवाद्यबोधनार्थं न प्रयोक्तुं शक्यते तस्यामेव सितारवाद्यव्यक्तौ विशेषरूपेण संकेतज्ञानात् सितारवाद्यमात्रे मणिरामशब्दस्य संकेताग्रहात्, घटादिशब्दानामपि तत्संकेतकर्तृपुरुषज्ञाने घटत्वावच्छिन्नव्यक्ति-

---

अर्थात् माता आदि को जान गये बालक, धीरे-२ उन-२ अम्बादि शब्दों द्वारा उन-२ अम्बा=माता आदि पदार्थों के विषय में, अपने पिता आदि के ज्ञान को देखकर, शब्द और अर्थ के, बोध्य-बोधक सम्बन्ध के बिना, किसी अन्य सम्बन्ध का ज्ञान न होने से और संकेत करने वाले अन्य पुरुष का भी ज्ञान न होने से, उन अम्बा आदि पदार्थों में पिता द्वारा उन अम्बा आदि शब्दों का जो प्रयोग किया जाता है, इससे यह शब्द इस अर्थ का बोधक है ऐसा निश्चय कर लेते हैं। यदि माता आदि शब्दों के संकेतक पुरुष का ज्ञान हो तब 'इसके द्वारा यह शब्द इस अर्थ में संकेतिक है' इस बुद्धि के उस अर्थ में प्रयोग होने पर भी, उससे अन्य (दूसरे) शब्द का तादृश अर्थ में प्रयोग नहीं होगा अतः प्रयोग में बोधकत्व निश्चय भी न हो सकेगा। जैसे मेरे संगीत गुरु तानसेन वंशावतंस श्रीअमृतसेन महोदय ने अपने सितार वाद्य के लिए मणिराम शब्द का प्रयोग किया, वहाँ उस प्रकार के संकेत और संकेत-कर्ता पुरुष गुरुदेव का ज्ञान होने के कारण, मेरे द्वारा मणिराम शब्द का प्रयोग, गुरुदेव के सितार से अन्य दूसरे सितार के लिए नहीं किया जा सकता है क्योंकि सितार मात्र में मणिराम शब्द का संकेत ग्रह नहीं हुआ है केवल गुरुदेव के सितार में ही मणिराम शब्द संकेतिक है। वैसे ही घट आदि शब्दों के भी संकेत करने वाले पुरुष का ज्ञान होने पर उस व्यक्ति के घट के लिए ही घट शब्द का प्रयोग हो सकेगा—घटत्वावच्छिन्न जितने भी घट हैं सब घटों के लिए 'घट' का प्रयोग नहीं किया जा सकेगा।

इति पूर्ववृद्धैः शिक्षिताः सर्वशब्दानामर्थमवगम्य परप्रत्यायनाय तत्तदर्थावबोधि वाक्यजातं प्रयुञ्जते ।

प्रकारान्तरेणापि शब्दार्थसम्बन्धावधारणं सुशकम्–केनचित् पुरुषेण हस्तचेष्टादिना 'पिता ते सुखमास्ते इति देवदत्ताय ज्ञापय' इति प्रेषितः कश्चित् तज्ज्ञापने प्रवृत्तः 'पिता ते सुखमास्ते' इतिशब्दं प्रयुङ्क्ते, पार्श्वस्थोऽन्यो व्युत्पित्सुर्मूकवच्चेष्टाविशेषज्ञस्तज्ज्ञापने

मात्रे प्रयोगो न स्यादितिभावः। संकेतयितृपुरुषाज्ञानाच्चाऽम्बादिशब्दा यावदम्बादिमात्रेर्थे प्रयोक्तु शक्यन्ते इति प्रयोगे तत्तदर्थबोधकत्वनिबन्धनत्वनिश्चयः संभवतीति सिद्धार्थबोधकत्वमपि संभवत्येव । पुनरिति–केषांचिच्छब्दानामर्थज्ञाने जाते 'आम्रोपरि पिकः कूजति' इत्यादिषु व्युत्पन्नेतरशब्देषु= पिकादिशब्दातिरिक्तज्ञातार्थशब्देषु वाक्येषु 'अस्य पिकादिशब्दस्यायमर्थः' इत्येवं पूर्ववृद्धैः शिक्षिता बालाः सर्वेषां शब्दानामनन्वितं शुद्धं स्वार्थमवगम्य परं प्रति तादृशार्थप्रत्यायनाय तत्तदर्थावबोधकं तत्तच्छब्दघटितं वाक्यवृन्दं प्रयुञ्जते इति न शब्दानां सिद्धार्थबोधकत्वानुपपत्तिरिति न वेदान्तविचारारम्भस्याप्यनुपपत्तिरित्यन्वयः । शक्तिग्रहोदाहरणं चेदं लोकप्रसिद्धमेव ।

सिद्धे पदार्थे शब्दशक्तिग्रहस्य प्रकारान्तरमाह–प्रकारान्तरेणेति, स्पष्टोयं ग्रन्थः। यदृच्छया शक्तिग्रहस्येदमुदाहरणम् । 'पिता ते सुखमास्ते इति देवदत्ताय ज्ञापय' इत्यर्थः केनचिद् हस्तचेष्टया कस्मैचिदुक्तस्तत्रस्थेन बालेनापि चेष्टाविशेषज्ञेनैषा चेष्टा प्रेषितेन च पुरुषेण सह स बालोपि देवदत्तसमीपे

इति भावः। संकेत करने वाले पुरुष का ज्ञान न होने से अम्बा आदि शब्द जितनी भी अम्बा= मातायें हैं, उन सबके लिए प्रयुक्त हो सकता है अतएव प्रयोग में तत् तत् अर्थ की बोधकता का निश्चय होता है, इस कारण सिद्ध अर्थ की बोधकता भी संभव होती है। पुनरिति—किन्हीं शब्दों के अर्थ का ज्ञान होने पर='आम के पेड़ के ऊपर पिक (=कोयल) कूक रही है' इत्यादि ऐसे वाक्यों में जहाँ कि 'पिक' आदि के अतिरिक्त अन्य शब्दों का अर्थ ज्ञात है, वहाँ इन वाक्यों में प्रयक्त पिक आदि शब्दों का यह (=कोयल) आदि अर्थ है—ऐसा बड़े लोगों के सिखाये गये बालक—सभी शब्दों के अनन्वित शुद्ध अपने अर्थ को जानकर, दूसरे व्यक्ति के प्रति, उस अर्थ का ज्ञान कराने के लिए, तत् तत् अर्थ के बोधक, तत् तत् शब्द वाले वाक्यों का प्रयोग करते हैं—अतः 'शब्द, सिद्ध अर्थ के बोधक नहीं है, यह नहीं कहा जा सकता'—वे सिद्ध अर्थ को भी कहते हैं—इसलिए वेदान्त विचार के आरम्भ में कोई अनुपपत्ति नहीं है—इत्यन्वयः। शक्तिग्रह का यह उदाहरण लोक प्रसिद्ध ही है।

सिद्ध पदार्थ में शब्द शक्तिग्रह का प्रकारान्तर कहते हैं—प्रकारान्तरेणेति, यदृच्छासे शक्तिग्रह का यह उदाहरण है—'तुम्हारे पिता सुखी है', यह देवदत्त को बतलादो' यह बात किसी ने हाथ का

श्रीरंगनाथ दिव्यदेश वृन्दावन में श्रीब्रह्मोत्सव

श्रीरंग मन्दिर वृन्दावन का दिव्यदेश श्रीवैष्णवों का अपना दिव्यदेश है। पूज्यपाद प्रातः स्मरणीय श्रीरंगदेशिक जी महाराज ने श्रीगोदा देवी के अभीष्ट पूर्ति क लिये श्रीलक्ष्मीचन्द्र सेठ जी के अर्थ सहायता से इस दिव्यदेश को बनवा कर श्रीगोदारंगमन्नार भगवान् के अर्चाविग्रहों की प्रतिष्ठा कर उत्तर भारत में श्रीवैष्णव सम्प्रदाय की श्रीवृद्धि की ओर इस मन्दिर की सुव्यवस्था हेतु एक सशक्त ट्रस्ट बोर्डको सौंप दिया। इस मन्दिर का वार्षिक महोत्सव श्रीब्रह्मोत्सव दि० ७-३-९६ को गरुड़ प्रतिष्ठा, रक्षाबन्धन श्रीविष्वक्सेनजीकी सवारीके साथ प्रारम्भ हो रहा है। दि० १७-३-९६ रविवार को रात में पुष्प विमान के साथ यह महोत्सव समापन की ओर अग्रसर होगा। यह उत्सव दर्शनीय होता है। दि० १४-३-९६ गुरुवार को रथ की सवारी देखकर भक्त अपने भाग्य को सराहाते हैं।

॥ श्रीगोदारंगमन्नारादिव्यदम्पतिभ्यां नमः ॥

श्रीमते रंगदेशिकस्वामिने नमः श्रीमते रामानुजाय नमः

श्रीरंग मन्दिर वृन्दावन का श्रीब्रह्मोत्सव

कार्यक्रम वि० सम्वत् २०५२

दिनांक	तिथि व दिन	समय	सवारी
८-३-९६	३ शुक्रवार	८-३० से १०-३० प्रातः	पूर्णकोठी सोने की
		७-३० से ११-३० रात्रि	सिंह चाँदी का
९-३-९६	४ शनिवार	८-०० से ११-०० प्रातः	सूर्यप्रभा सोने की
		७-०० से १०-०० रात्रि	हंस चाँदी का
१०-३-९६	५ रविवार	७-०० से १०-३० प्रातः	श्रीगरुड़जी सोने के
		७-०० से १०-०० रात्रि	श्रीहनुमानजी सोने के (छोटी आतिशबाजी)
११-३-९६	६ चन्द्रवार	८-०० से १०-३० प्रातः	श्रीशेषजी चांदी का
		७-३० से १०-३० रात्रि	कल्प वृक्ष
१२-३-९६	७ मंगलवार	७-०० से २-०० मध्याह्न	पालकी चाँदी की
		७-३० से १०-३० रात्रि	सिंह शार्दूल चाँदी का
१३-३-९६	८ बुधवार	४-०० से ६-०० सांय	कांच का विमान होली
		९-३० से १२-०० रात्रि	हाथी सोने का
१४-३-९६	१० गुरुवार	७-३० से ३-०० मध्याह्न	रथ की सवारी
१५-३-९६	११ शुक्रवार	९-३० से ११-०० रात्रि	घोड़ा सोने का (बड़ी आतिशबाजी)
१६-३-९६	१२ शनिवार	७-०० से १०-३० प्रातः	पालकी सोने की
		१२-०० से ३-०० मध्याह्न	श्रीयमुना स्नान
		८-०० से ११-३० रात्रि	चन्द्रप्रभा चाँदी का
१७-३-९६	१३ रविवार	११-०० से १-०० रात्रि	पुष्प विमान

रजि० नं० एम० डी० आर० २०७

अनन्त-सन्देश के उद्देश्य

सर्वसाधारण भगवत्प्रेमानुरागियों को प्रभु प्रेम-रसामृतपान कराकर मानव समाज को पूर्ण सुख शान्ति प्रदान करते हुए ईश्वरोन्मुख होने में उत्पन्न भ्रम, विवाद एवं परस्पर द्वेष को समूल नष्ट करना और भगवत्प्रेम के दिव्य आदेश को उपस्थित करना साथ ही पूज्य श्रीकांची प्र० भ० अनन्त श्रीविभूषित श्रीस्वामी अनन्ताचार्यजी महाराज के सदुपदेशों का प्रचार-प्रसार व श्रीवैष्णव सम्प्रदाय की वृद्धि इस मासिक-पत्र का उद्देश्य है।

नियम

यह पत्र शुद्ध पारमार्थिक पत्र का वाचिक है।

व्यवस्था सम्बन्धी

१—पत्र प्रत्येक माह की २७ तारीख को प्रकाशित होगा। किसी कारणवश देर भी हो सकती है।

२—इस पत्र की वार्षिक भेंट देश में ३०)रु० होगी। २५) रु० नहीं।

३—जो सज्जन इसको एक समय में ३०१)रु० भेंट प्रदान करेंगे वे पत्र के आजीवन सदस्य होंगे, यह पत्र उन्हें आजीवन मिलता रहेगा।

४—जो सज्जन मास की ५ तारीख तक पत्र प्राप्त न कर सकें, उन्हें कार्यालय को पत्र लिखकर कारण जान लेना चाहिये यदि अङ्क नही भेजा गया होगा तो भेजा जायेगा। यदि भेज दिया गया है तो उसकी जानकारी दी जायेगी।

५—व्यवस्था सम्बन्धी सभी पत्र-व्यवहार नीचे लिखे पते पर करना चाहिये।

सम्पादक सम्बन्धी

१—इस पत्र में भगवत् प्रेम सम्बन्धी, ज्ञान, भक्ति प्रपत्ति के भावपूर्ण लेख एवं कवितायें ही प्रकाशित हो सकेंगीं।

२—लेख स्पष्टतया कागज के एक ओर लिखकर भेजना चाहिये।

३—लेखों के घटाने-बढ़ाने, छापने न छापने आदि का पूर्ण अधिकार सम्पादक को होगा।

४—लेख, कविता तथा सम्बन्धित-पत्र सम्पादक अनन्त-सन्देश, वृन्दावन, उ० प्र० के पते पर भेजना चाहिए जो माह की १० तारीख तक मिल सकें।

५—विवादास्पद एवं अधूरे लेख स्वीकृत न होंगे

६—किसी लेखक के मत के उत्तरदायी सम्पादक नही होंगे।

७—सम्पादक सम्बन्धी समस्त लिखा-पढ़ी निम्न पते पर करनी चाहिए।

—पत्र व्यवहार के पते—

व्यवस्थापक—
श्रीवेङ्कटेश देवस्थान
८०/८४ फणसवाड़ी, बम्बई—२

सम्पादक—
श्रीरङ्गनाथ प्रेस
वृन्दावन (मथुरा) उ० प्र०, फोन : ४४२१११

इस पत्र के व्यवस्थापक एवं मालिक श्रीवेङ्कटेश देवस्थान ८०/८४ फणसवाड़ी बम्बई-२ ने सम्पादक पं. श्रीकेशवदेव शास्त्री द्वारा श्रीरङ्गनाथ प्रेस, रङ्गजी का पश्चिम कटरा, वृन्दावन से छपवाकर प्रकाशित किया।